DATTOPANT जी

हिन्दू चिन्तन और चुनौतियाँ

केशव स्मृति महाविद्यालय
सोमनाथ मन्दिर के पास, पाली

हिन्दू - चिन्तन
और
चुनौतियाँ

(रा० स्व० संघ के बंगलौर में आयोजित अखिल भारतीय कार्यक्रम में दिये गये मा० ठेंगड़ी जी, सुदर्शन जी एवं मा० रज्जू भय्या के भाषणों का संकलन)

मुद्रक :
कौशल प्रेस

प्रकाशक :
लोकहित प्रकाशन, राजेन्द्र नगर, लखनऊ

मूल्य :
रु० २.५०

अपनी बात

प्रस्तुत पुस्तक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा बंगलौर में आयोजित एक अखिल भारतीय कार्यक्रम में दिये गए तीन भाषणों का संग्रह है।

हिन्दूतत्वज्ञान सनातन है, प्रगतिशील है तथा युगीन समस्याओं का समाधान करने में सक्षम है—इस विषय का अत्यंत सारगर्भित विवेचन प्रसिद्ध विचारक श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी ने किया है।

'हिन्दूराष्ट्र' आज का बहुचर्चित विषय है उसके सम्बन्ध में संघ के अखिल भारतीय बौद्धिक प्रमुख श्री सुदर्शन जी ने नए परिप्रेक्ष्य में तर्कशुद्ध व्याख्या रखी है साथ ही साथ सरकार्यवाह प्रो० राजेन्द्र सिंह जी (मा० रज्जू भैया) का 'हिन्दू समाज पर उपस्थित तीन आक्रमणों' का सरल विवेचन इस पुस्तक में समाविष्ट किया गया है।

हमें विश्वास है कि हमारे प्रबुद्ध राष्ट्रभक्त पाठकों के लिये पुस्तक बड़ी उपयोगी व मार्गदर्शक होगी।

मकर संक्रान्ति १९८२ **—प्रकाशक**

हिन्दू विचार–विकसनशील आविष्कार

मा० दत्तोपंत ठेंगड़ी

संघ का विचार अर्थात् हिन्दु विचार

हिन्दु विचार परिकल्पना की दृष्टि से, संघ व हिन्दु राष्ट्र सम-व्याप्त है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संघ सम्पूर्ण हिन्दुराष्ट्र के साथ एकात्म है। इस दृष्टि से संघ, यह एक संस्था न होते हुए, सम्पूर्ण राष्ट्र है। इसलिए संघ का विचार यानी हिन्दू विचार, यानी सनातन विचार है। और इसके कारण जो सनातन विचार है उसी का बार-बार आविष्कार हो रहा है। बार-बार आविष्कार की आवश्यकता होती है। जो बात एक बार बोली गई थी बार-बार इस कारण बोलना पड़ती है कि बीच में बहुत समय निकल जाने के कारण लोगों का समाधान कम हो जाता है। उसको पुनः ठीक करने के लिये वही बात फिर से बतानी पड़ती है जैसा समर्थ रामदास ने कहा:—

कर्म केलेंचि करावें, ध्यान धरिलेंचि धरावें।
विवरिलेंचि विवरावें — पुन्हा-निरूपण ॥
ते सेचि आम्हां धडलें, बोलेलेंचि बोलणें पडलें।
कां जें विधडिलेंचि धडिलें-समाधान ॥

उसी तरह से जो-जो बताया जा रहा है वह पुराना ही विचार है—एक ही विचार, सनातन विचार है। परिस्थिति के अनुसार उसी का (Progressive unfoldment) विकसनशील आविष्कार बार-बार रखा जा रहा है।

दूसरी बात जो पाश्चिमात्य लोगों के अहंकार के कारण कही गई कि पश्चिमी देशों का इतिहास का जो विकास-क्रम है वही संसार के हर देश व हर समाज का रहना ही चाहिये। ऐतिहासिक विकास का कोई दूसरा ढंग, दूसरा चित्र हो ही नहीं सकता। परन्तु पश्चिम के राष्ट्र तो बच्चा-राष्ट्र हैं। ४००-५०० साल से ज्यादा उनकी उमर नहीं है। हमारा सनातन राष्ट्र है। इतिहास ने जब आंखें खोली तो हमें राष्ट्र के रूप में हा देखा।

हमारा ऐतिहासिक विकास क्रम भिन्न

इसलिए हमारा ऐतिहासिक विकास क्रम भिन्न है। केवल हमारा ही भिन्न है, ऐसी बात नहीं। अलग-अलग देशों का अपना-अपना ऐतिहासिक विकास-क्रम भिन्न-भिन्न है। किन्तु सभी का ऐतिहासिक विकास-क्रम वैसा ही होना चाहिए जैसा हमारा रहा है—यह भी एक आग्रह पश्चिम का रहा और इसके कारण जो बातें हमारे यहां नहीं थीं, उन बातों का आरोप पश्चिम की नकल करते हुये किया गया। केवल उदाहरण के लिये २-३ बातें बताऊंगा।

हम जानते हैं कि पश्चिम में पहले मानर्की थी, „माने सर्वेसर्वा राजा-शाही। उन्होंने कहा कि हिन्दुस्तान में भी ऐसा ही है। वास्तव में हिन्दु-स्तान में मानर्की नाम की व्यवस्था कभी भी नहीं रही। हां अहिन्दुओं से सम्पर्क आने के पश्चात उनमें जो मानर्की थी उसकी थोड़ी बहुत नकल हमारे यहाँ राजाओं ने की होगी किन्तु हमारे यहां हजारों साल तक विभिन्न शासन प्रणालियां रहीं—मानर्की (राजतंत्र) नाम की प्रणाली कभी रही नहीं।

योरुप में, आर्थिक विकास-क्रम में सामन्तशाही रही—फेडेवलिज्म का विकास हुआ। उन्होंने कहा कि हिन्दुस्तान में भी ऐसा ही हुआ होगा। वास्तव में हमारे यहाँ फेडेवलिज्म या सामन्तशाही नाम की जैसी कोई बात नहीं थी। हाँ, लार्ड कार्नवालिस द्वारा परमानेन्ट सेटिलमेन्ट लाने के पश्चात फिर कुछ सामन्तशाही का स्वरूप सीमित मात्रा में दिखाई दिया। किंतु हमारी प्राचीन रचना में हजारों साल तक सामन्तशाही—इस नाम

की कोई चीज नहीं थी । अब तो यह बात कम्युनिस्टों को भी माननी पड़ती है और इसलिए अब उन्होंने (Feudalorder) सामन्तशाही पद्धति कहने के बजाय—उसको कुछ नाम देना चाहिये, इसलिये (Asiatic order of society)ऐसा कहा जिसका कुछ भी अर्थ नहीं। किन्तु योरुप में सामन्तशाही थी इसलिये यहां हिन्दुस्थान में भी होनी चाहिए—यह प्रचार था—

अब जहां तक रिलीजन का प्रश्न,है, हम सब जानते हैं, इसका भी विस्तार करने की आवश्यकता नहीं कि हमारे यहां जो धर्म नाम की बात है उसकी समकक्ष बात पश्चिम में कोई भी नहीं । गलती से धर्म यानी रिली-जन उसका यह भाषांतर किया गया । यह विषय भी बहुत चर्चित है, इसको लेने की आवश्यकता नहीं । लेकिन पश्चिम में रिलीजन की जो भूमिका रही—वह अन्य तरह की रही । वही भूमिका हमारे यहाँ होगी—यह समझकर उसका आरोप हमारे सांस्कृतिक इतिहास पर किया गया । वास्तव में वहाँ (Roman catholic church) रोमन कैथोलिक चर्च सम्पूर्ण योरुप में छाया था । और उसका प्रभुत्व न केवल आध्यात्मिक क्षेत्र में अपितु भौतिक क्षेत्र में भी, सब लोगों को—यहाँ तक कि वहां के राजाओं को भी मानना पड़ता था । इस तरह की कोई रचना हमारे यहाँ कभी नहीं रही । हमारे यहाँ पुरोहित थे किन्तु—आर्गेनाइज्ड चर्च एक भी नहीं था और इस कारण आर्गेनाइज्ड चर्च के फलस्वरूप जो दुष्परिणाम होते हैं वे दुष्परिणाम हमारे यहाँ नहीं रहे ।

हमारी रचना के अंगभूत दुष्परिणाम हो सकते हैं लेकिन उस प्रकार की बात नहीं थी । लेकिन यहां की जो प्रमुख विचारधारा—रिलीजन के क्षेत्र में होगी उससे मतभेद रखने वाले कुछ विचार दिखे तो एकदम कहा गया कि जैसे वहाँ (catholic church) कैथोलिक चर्च के खिलाफ प्रोटेस्टेन्ट्स विद्रोह हुआ वैसे ही यहां भी विद्रोह हुआ होगा । ऐसी एक मनगढ़न्त कल्पना की गई । वास्तव में यहां विद्रोह नहीं हुये क्योंकि यहां आर्गेनाइज्ड चर्च नहीं था ।

अलग-अलग विचारधारायें यहां हमेशा रही हैं। विविधता में एकता रही है और इसके कारण कहीं बौद्ध है, कहीं जैन है, सिक्ख सम्प्रदाय का भी प्रभाव हुआ होगा, यहां तक कि भौतिकवाद का दर्शन भी काफी मात्रा में हमारे यहाँ रहा है, जिसको लोकायतम कहा। किन्तु यह एक दूसरे के विद्रोह के रूप में नहीं थे। सह-अस्तित्व सभी विचारधाराओं का था किन्तु पाश्चमात्य पंडित उस बात को इसलिए नहीं समझ सके क्योंकि उनके यहां एक सम्पूर्ण योरुप को व्याप्त करने वाला आर्गेनाइज्ड चर्च था और उसके खिलाफ विद्रोह हो गया तो उन्होंने यहां भी वही कहा। हमारे भी अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों ने मान लिया क्योंकि—

"साहब वाक्य प्रमाणम्" ऐसी मनोवृत्ति रही। अब इस तरह के कई उदाहरण दिये जा सकते हैं जिसमें हमारा इतिहास का विकास का क्रम उनके ऐतिहासिक विकास-क्रम से भिन्न है। इस बात को भुलाने का प्रयास किया गया और उनके विकास-क्रम के ढांचे में हमारी सारी रचना बनाई गई। वह एक गलत बात जान बूझकर हमें आत्म विस्तृत करने के लिए की गई।

वैचारिक संभ्रम का निर्माण

एक तीसरी बात भी है। हमारे विद्वान लोगों पर यह संस्कार डाला गया कि हिन्दुस्तान में तो कुछ भी नहीं था, जो कुछ है वह पश्चिम में है। तभी तो हम साम्राज्य कर रहे हैं। तुम्हारे अन्दर क्षमता होती तो तुम भी हमारे जैसे साम्राज्य करते। मनुष्य जाति की प्रगति का अगर कोई माडेल होगा तो यह माडेल पश्चिम का है। वही सभी समाजों का, सभी देशों का माडेल होना चाहिए। यह भी एक गलत विचार रखा गया। वास्तव हर एक समाज की अपनी एक संस्कृति होती है। उसकी संस्कृति के मुताबिक उसकी प्रगति का माडेल होता है। अंग्रेजी में पेराडाइज शब्द का प्रयोग करते हैं—तो किसी भी एक देश की प्रगति का(Paradise)पैराडाइज (स्वर्ग), यह सार्वलौकिक नमूना (यूनिवर्सल माडेल) नहीं हो सकता। उस समय उनके

साम्राज्य से हम लोग चकाचौंध हो चुके थे अतः उन्होंने कहा और हमारे लोगों ने मान लिया कि बस पश्चिम की नकल करना याने प्रगति होगी। इसलिए गलत कल्पना आ गई। आधुनिकीकरण याने पश्चिमात्य देशों की नकल, (इस तरह एक गलत भाव पैदा हुआ) और पश्चिम के मापदंड से हमारे देश की प्रगति का हम अन्दाजा लगाने लगे। यह एक वैचारिक सम्भ्रम निर्माण किया गया। अब इन बातों से याने लार्ड मैकाले के समय से लेकर अबतक—जान बूझकर नव-स्वतन्त्र अविकसित देशों में, सभी श्वेत राष्ट्रों में, साम्राज्यवादी राष्ट्रों में—यह गलत प्रचार चलाया है इसलिये कि हम लोग उनका प्रभुत्व मान लें, वैचारिक प्रभुत्व मान लें।

अब जबतक इस गलत प्रचार से हम अपने मन को मुक्त नहीं करते, तबतक अपना विचार क्या है, यह ठीक से समझना हमारे लिए बहुत कठिन होगा जैसे मैले कपड़े को पहले धोया जाता है बाद में उसको रंग देना सम्भव होता है वैसे ही अबतक जो गलत बातें सिखाई गई हैं वे भूलनी होंगी और फिर सही बातें क्या हैं- उसे देखना होगा।

हिन्दू समाज रचना क्या है ?

लोग पूछते हैं कि (Is there any Hindu social order?) हिन्दु समाज रचना यानी क्या है ? अब वास्तव में यह पाश्चिमात्य पद्धति का प्रश्न है। इसका एक कारण है, पश्चिम के सोचने का ढंग और हिंदुओं के सोचने का ढंग हमेशा अलग रहा है। पश्चिम ने यह सोच लिया कि सामाजिक-आर्थिक रचना एक बार ठीक से हो जायेगी तो वह पर्याप्त है। मनुष्य के मन का अलग से विचार करना आवश्यक नहीं है। जैसी सामाजिक, आर्थिक रचना रहेगी वैसा ही मनुष्य का मन स्वाभाविक रूप से ढल जायेगा। फिर मनुष्य के मन के फलस्वरूप जो चीजें निर्माण होती हैं—संस्कृति है, धर्म है, नीतिशास्त्र है, रिलीजन है ये सारी चीजें हैं मानो (Superstrutcure) परिष्कृत रचना है, सामाजिक आर्थिक रचना का (Superstructure) परिष्कृत रचना हैं। सामाजिक व आर्थिक रचना ठीक हो जायेगी तो यह परिष्कृत रचना स्वाभाविक रूप से तदानुकूल ठीक हो जायेगी—ऐसा उनका पक्का

विचार है। कैपिटलिज्म से लेकर अनारकिज्म तक पश्चिम में कई विचार-धारायें हो गईं लेकिन सबने यह विचार मान लिया है कि सामाजिक आर्थिक रचना का विचार करना पर्याप्त है—फिर नीतिशास्त्र है, साहित्य है, कला है, संस्कृति है—इन सब बातों के विचार करने की आवश्यकता नहीं। तदानुकूल इनका विकास स्वाभाविक रीति से हो जायेगा।

वैश्विक नियमों के प्रकाश में युगानुकूल समाज रचना

हमारे यहाँ ऐसा नहीं सोचा गया। हमारे यहां सामाजिक आर्थिक रचना का, राजनैतिक रचना का, महत्व तो माना गया और इस दृष्टि से वह रचना कैसी हो इस पर हमारे यहां समय-समय पर विचार होते गये हैं और हमारे द्रष्टाओं ने वैश्विक नियमों का दर्शन किया था जो त्रिकालाबाधित सत्य के रूप में है—जो अपरिवर्तनीय है। उनके प्रकाश में जैसे-जैसे समय बीतता है, परिस्थिति बदलती है, समस्यायें बदलती हैं—पूर्व के समय में कल की परिस्थिति में समाज की धारणा के लिए जो नियम पर्याप्त थे, सक्षम थे, अब नई समस्याओं का मुकाबला नहीं कर सकते तो नई रचना करने की आवश्यकता होती है। अतः अपरिवर्तनीय वैश्विक नियमों के प्रकाश में अखंड परिवर्तनशील समाज रचना—इसी कारण बार-बार नई स्मृतियों का निर्माण—यह पद्धति रही है। पिछले ११०० साल स्वतंत्रता संग्राम में रत रहने के कारण इस तरह की नई स्मृति का निर्माण नहीं हो सका। किन्तु हमारी यह पद्धति रही है कि अपरिवर्तनीय नियमों के प्रकाश में जिनका दर्शन हमारे द्रष्टाओं ने किया था, अखंड परिवर्तनशील समाज रचना करना और इस तरह हर क्षेत्र में तरह-तरह की हमारी रचनायें रही हैं। केवल राजनैतिक क्षेत्र का ही विचार किया तो कितने ही प्रकार की रचनायें हमारे यहां रही हैं। अपने यहां तो मंत्र हैं—"ओइम् स्वस्ति साम्राज्यम् भौज्यं स्वराज्यं वैराज्यं परमेष्ठयं राज्यं महाराज्याधिपत्यम्।"

यह सारी अलग-अलग शासन प्रणालियां हैं। मनुष्य की प्रतिभा

स्वतंत्र है, चाहे जैसे प्रगति कर सकती है। सामाजिक रचना में भी, आर्थिक रचना में भी समय-समय पर अपने यहां परिवर्तन हुआ है। हमारे यहां सामाजिक रचना, आर्थिक रचना—इसका महत्व तो माना ही गया है। परन्तु वह रचना कैसी रहे यह तय करने का अधिकार नैतिक नेताओं को, ऋषियों को था, मुनियों को था, स्मृतिकारों को था। वह राजाओं को नहीं था। यह बात तो ठीक है कि राजदण्ड के ऊपर हमारे यहां हमेशा धर्मदण्ड रहा है। इस दृष्टि से आज की परिस्थिति में भी जो रचना आवश्यक लग सकती है उसको लेने की पूर्ण स्वतंत्रता हमारे यहां है। केवल एक शर्त है कि हमारे धर्म अर्थात वैश्विक नियमों के प्रकाश में होना चाहिए। इस बन्धन के साथ चाहे जैसी भी रचना लेने की हमें पूरी स्वतंत्रता है कोई और तरह का बन्धन हमारे ऊपर नहीं है।

मन संस्कारित करना आवश्यक

किन्तु हमारे द्रष्टाओं ने ऐसा देखा कि जबतक मनुष्य का, समाज के एक-एक व्यक्ति का मन संस्कारित नहीं रहेगा केवल बाह्य समाज रचना बदलने से काम नहीं चल सकता, मैं अकेला नहीं, पृथक नहीं, स्वतन्त्र नहीं, मैं सम्पूर्ण समाज का एक अंग मात्र हूं, सम्पूर्ण समाज यानी एक शरीर उसका एक अवयव यानी मैं, शरीर के साथ एक-एक अवयव का जैसा अविभाज्य सम्बन्ध रहता है वैसा ही अविभाज्य सम्बन्ध सम्पूर्ण समाज के साथ है—यह साक्षात्कार जबतक एक-एक व्यक्ति के हृदय में नहीं होगा तबतक आप अच्छी से अच्छी रचना लाइये, वह रचना या तो आ ही नहीं सकती, आई तो वह टिक नहीं सकती, फलदायी नहीं हो सकती।

इस दृष्टि से जहां पश्चिम ने यह सोचा कि मनुष्य के मन की अलग से चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं, मस्तिष्क भी भौतिक पदार्थों की परिष्कृत रचना है, हमारे यहां यह सोचा गया कि बाह्य समाज रचना का भी विचार करना चाहिये। किंतु बाह्य रचना अच्छी से अच्छी आई तो भी तबतक ठीक नहीं चल सकती जबतक मनुष्य का मन, तदन्तर मन ठीक

नहीं। इसलिये मनुष्य का मन सुसंस्कारित करना चाहिये। और बाह्य परिस्थिति का मनुष्य के मन पर भी परिणाम होता है यह जो पाश्चात्य लोगों ने कहा और हमारे ऋषियों ने भी कहा कि, यह है अवश्य किंतु यह अर्ध सत्य है। मनुष्य के मन का भी बाह्य परिस्थितियों पर परिणाम होता है। बाह्य परिस्थिति और मनुष्य का मन एक दूसरे पर क्रिया व प्रतिक्रिया करते हैं। परन्तु भगवान ने मनुष्य के मन को इच्छाशक्ति नाम की शक्ति दी है। इसके कारण दोनों में से अधिक निर्णायक ऐसा अगर कोई तत्व होगा तो वह मनुष्य का मन है। याने परिस्थिति का मन पर और मन का परिस्थिति पर परिणाम होता है किंतु अधिक निर्णायक तत्व मनुष्य का मन है। यह मनुष्य का मन उचित संस्कार से युक्त रहेगा तब तो कोई भी समाज रचना चल सकेगी। यहां तक कि आज की समाज रचनायें भी खराब हैं तो भी उसको ठीक करने का काम भी उचित संस्कार के व्यक्तियों के द्वारा हो सकता है, लेकिन यदि उचित संस्कारों से, समाज के साथ एकात्मता के संस्कारों से युक्त मनुष्य का मन नहीं तो आप अच्छी से अच्छी रचना लाइये, वह रचना नहीं चल सकती—यह हमारे ऋषियों का विचार था।

कुछ निष्कर्ष

जैसे मैंने कहा कि कैपिटलिज्म से लेकर अनारकिज्म तक अलग-अलग इज्म हैं, उनके अलग-अलग विचार हैं किन्तु सब में एक समान विचार हैं। वह यानी कि केवल बाह्य रचना का विचार करने की ही आवश्यकत है। यह उनका विचार ठीक है कि हमारे ऋषियों का विचार ठीक है—इस विषय में कुछ निष्कर्ष निकालने का समय अब उपलब्ध है। शायद १०-२० साल पहिले यह समय उपलब्ध नहीं था। अब उपलब्ध है। जिसका सबसे अधिक बोलबाला है वह है यानी कम्यूनिज्म, उसके भी प्रयोग कई देशों में पिछले तीन दशक से हो ही रहे हैं—रशिया में छै दशकों से भी अधिक समय हो चुका है। अब जो कम्युनिस्ट शासित देश हैं उनका अनुभव

हम देखें। बहुत गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं, तो उदाहरण के लिए मनुष्य का मन और वाह्य परिस्थिति इस दृष्टि से मैं एक-दो ही बातें बताऊंगा।

रशिया में कम्यूनिस्टों के हाथ में शासन की बागडोर आकर छ दशकों से अधिक समय बीत गया है तो भी ५ महीने के पहले रशिया की कम्यूनिस्ट पार्टी की जो राष्ट्रीय कांग्रेस हुई उसमें भाषण देते समय ब्रेझनेव ने स्पष्ट स्वीकृति दी कि कई सामाजिक दोष, व्यक्तिगत दोष, कम्यूनिस्ट समाज में रशिया में आज उभर रहे हैं, जिसमें उन्होंने भ्रष्टाचार का भी नाम लिया है। Permissiveness का भी नाम लिया है, और भी कई बातें हैं सबको गिनने की आवश्यकता नहीं। ब्रेझनेव ने जिन व्यक्तिगत व सामाजिक दोषों की गिनती की है वे दोष ऐसे हैं जिनके बारे में यह कहा गया था कि यह सारे दोष सरमायेदारी समाज रचना के विशेष लक्षण हैं और जैसे ही सरमायेदारी समाज रचना टूट जायेगी वैसे ही यह सारे दोष नष्ट हो जायेंगे तथा कम्यूनिस्ट रचना में यह सारे दोष बिल्कुल दिखाई नहीं देंगे। जिन दोषों के बारे में ऐसा कहा गया था, यह सारे दोष फिर से उभर कर ऊपर आ रहे हैं—ऐसी स्पष्ट स्वीकृति अभी ब्रेझनेव ने ५ महीने पहले दी।

दूसरा उदाहरण कुछ स्थानों पर मैंने दिया था कि १९४८ में कम्यूनिस्ट की राज्य क्रान्ति चाइना में हुई। उसके पश्चात १९६७ में सांस्कृतिक क्रान्ति का उद्घाटन करते समय उसकी प्रयोजनीयता माओ ने बताई। उसने यह बताया कि ४८ में हमने क्रान्तिकारी कम्यूनिस्ट शासकों के हाथ में शासन की बागडोर दी किन्तु अभी तक का अनुभव ऐसा है कि एक बार शासन में आने के पश्चात धीरे-धीरे कल के क्रान्तिकारियों के मन में एक निहित स्वार्थ का भाव निर्माण होता है। क्रान्ति का रथ यदि आगे बढ़ेगा तो हमारे निज के स्वार्थ को धक्का लगेगा इस कारण ये क्रान्ति का रथ आगे न बढ़े, इसकी कोशिश करने लगते हैं—obstructionist बन जाते हैं, मार्ग के रोड़े बन जाते हैं और इनको जब तक नहीं हटाया जाता

तबतक क्रान्ति का रथ आगे नही जा सकता इसलिए मैं इनको हटाने के लिए 'सांस्कृतिक क्रांति, ला रहा हूं। उनके वाक्य हैं कि कल के क्रान्तिकारी आज के प्रतिक्रान्तिकारी हैं। लेकिन साथ ही साथ यह भी कहा कि इस 'सांस्कृतिक क्रान्ति' के द्वारा आज के प्रतिक्रान्तिकारी शासकों को हटाकर नये क्रान्तिकारी शासकों के हाथ में बागडोर दी तो भी १०, १५, २० साल के बाद आज के क्रान्तिकारी शासक भी फिर प्रतिक्रान्तिकारी बन जायेंगे और उनको हटाने के लिए फिर से क्रान्ति की आवश्यकता होगी और फिर नये शासक लाने पड़ेंगे। वे भी १०, १५, २० साल के बाद फिर प्रतिक्रान्तिकारी बन जायेंगे उनको हटाने के लिये फिर क्रांन्ति लानी पड़ेगी इसलिये अखंड क्रान्ति का सिद्धान्त माओ ने प्रतिपादित किया। यह अखंड क्रान्ति का सिद्धांत भी इस बात की स्पष्ट स्वीकृति है कि उनका जो विचार था कि बाह्य रचना में परिवर्तन होने से सब कुछ हो जाता है, लोगों का मन तदानुकूल अपने आप बन जाता है यह विचार गलत था। तो आर्य ऋषियों का जो विचार था कि परिस्थिति का मन पर और मन का परिस्थिति पर परिणाम अवश्य होता है—लेकिन अधिक निर्णायक तत्व मनुष्य का मन है, यही ठीक था और इसके कारण उन्होंने संस्कारों को महत्व दिया था

अतः जब यह कहा जाता है कि कम्यूनिज्म का सोशल आर्डर यह है, कैपिटलिज्म का यह है, हिन्दू का क्या है ? हिदुओं का कहना है कि यह प्रश्न हवा में उत्तर देने लायक नहीं है।

समाज रचना क्या है इसके लिये हमारे यहां तरह-तरह के विकल्प हो चुके हैं कौन सा (Social order) अच्छा है इसका हवा में उत्तर नहीं दिया जा सकता। परिस्थितियां कैसी हैं देखना पड़ेगा, वैसे ही मनुष्य की मनःस्थिति क्या है ? संस्कार क्या हैं ? समाज का मनोवैज्ञानिक वायुमंडल क्या है ? समाज में जीवन मूल्य क्या है ? सामाजिक मान्यता उस समय समाज में क्या है ? यह सब ध्यान में रखते हुए तब सामाजिक रचना का विचार हो सकता है। चूंकि पश्चिम के लोग इन बातों को

नहीं सोचते इसलिए वे सीधा प्रश्न विचारते हैं कि सामाजिक रचना आपकी कौन सी है। इन सब बातों का, याने सामाजिक मनोविज्ञान का, विचार करके तब कौन सी सामाजिक रचना हो यह बताया जायगा। केवल यह पूछना कि कौन सी सामाजिक रचना हो गलत बात है। जैसे कौन सा पेड़ अच्छा है ? अरे आवश्यकता कौन-सी है ? हम क्या चाहते है ? यह सारा देखकर बताया जायगा कि कौन सा पेड़ अच्छा है। यदि कोई पूछेगा कि कौन सी दवा अच्छी है ? यह प्रश्न गलत है। बीमारी कौन सी है, उस बीमारी के लिए कौन सी दवा अच्छी है तब यह बताया जा सकता है। वैसे ही सामाजिक मनोविज्ञान कैसा है ? सामाजिक वायु-मण्डल कैसा है ? तभी उसके लिए सामाजिक रचना कैसी हो यह अलग से उत्तर दिया जा सकता है। परन्तु उन्होंने इन बातों को आंखों से ओझल कर दिया था इसलिए पूछते हैं कि सामाजिक रचना कौन-सी अच्छी है ? हिन्दू क्या मानते हैं ?

सभी रचनाओं का केन्द्र बिन्दु क्या ?

अब हमारे यहां संस्कारों पर इतना आग्रह दिया गया और रचना के विषय में स्वतन्त्रता दी गई शाश्वत सिद्धान्तों के प्रकाश में उस देश की परिस्थिति के अनुकूल हम परिवर्तन कर सकते हैं यह हमारे यहां बताया गया। अब इसमें हमारे और उनके विचार पद्धति में कुछ मौलिक अन्तर है ऐसा दिखाई देता है। पं० दीनदयाल जी ने उसका पूर्ण विश्लेषण किया था। सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक सभी रचनाओं का विचार करते समय, प्रारम्भ का बिन्दु क्या रहे—यह प्रश्न है। परमपूज्य श्री गुरुजी ने ऐसा कहा कि अन्तिम साक्षात्कार जो है, अन्तिम सत्य जो है उसके प्रकाश में यदि रचना होगी तो वह स्थायी रहेगी। वह रचना स्वस्थ रहेगी। अन्तिम सत्य को ओझल करते हुए जो रहेगी वह स्थायी नहीं रहेगी, वह स्वस्थ नहीं रहेगी। और अन्तिम सत्य है कि सम्पूर्ण चराचर में एक ही अस्तित्व है, एक ही चैतन्य है—बाकी सब उसी के आविष्कार के रूप में है।

तो यह जो अद्वैत है, जो अन्तिम सत्य है उसके प्रकाश में उसको ध्यान में रखते हुए जो-जो रचना होगी उसके अनुसार उसमें स्थायित्व, उसमें स्व-स्थता हो सकती है अन्यथा नहीं ।

पश्चिम का विचार अतिरेकी

अब यह बातें तो वहां नहीं हैं इसी के कारण हम देखते हैं कि पश्चिम का विचार केवल भौतिकवादी है और इसके कारण उसके विचार का लम्ब इस किनारे से उस किनारे तक जाता है। केवल संक्षेप में यदि निर्देश करना हो तो प्रारम्भ में हम देखते हैं कि राजतन्त्र में एकदम सभी अधिकारों का केन्द्रीकरण था उसके विरोध में जो एक रचना हो गई तो उसमें एकदम उसके विरोध में प्रतिक्रिया स्वरूप जनतन्त्र में आई । व्यक्ति–स्वातन्त्र्य आ गया । व्यक्ति स्वातंत्र्य के अन्तर्गत शोषण स्वातंत्र्य आया और शोषण स्वातंत्र्य के कारण थोड़े लोग बहुत जन का शोषण करने लगे, विरोध में एक प्रतिक्रिया फिर निर्माण हुई, कहा शोषण—स्वातंत्र्य समाप्त होना चाहिए । वह व्यक्ति स्वातंत्र्य के अन्तर्गत आता है इसलिये व्यक्ति—स्वातंत्र्य समाप्त होना चाहिए । तो एक सर्वेसर्वा ऐसी सरकार निर्माण होनी चाहिए, किसी को कोई स्वतन्त्रता नहीं, यह सरकार समानता निर्माण करेगी, ऐसी घोषणा की गई । समानता तो निर्माण नहीं हुई पर व्यक्ति—स्वातंत्र्य का अपहरण हो गया और जिनके हाथ में शासन था वे अधिक बलशाली, अधिकार-शाली बन गये । इस तरह इस किनारे से उस किनारे उनका लम्ब जाता है ऐसा दिखता है ।

इसके कारण प्रमुख रूप से दो विचार-पद्धतियां वहां निर्माण हुईं। एक जो व्यक्ति को प्राधान्य देती है । सब कुछ व्यक्ति के लिये है । समाज भी व्यक्ति के सुख के लिए—तो व्यक्तिवादी रचना निर्माण हुई—उसके प्रतिक्रिया के रूप में एक दूसरे विचार साम्यवाद के नाम पर सरकारीकरण निर्माण हुआ कि सब कुछ सरकार है। सरकार ने सब लोगों का नियंत्रण करना। ऐसी दो रचनाएं निर्माण हुईं। उदाहरण के लिए अगर कहा जाए

तो एक का माडल है क्लब का—क्लब में, मौलिक इकाई व्यक्ति रहता है, क्लब तो मौलिक इकाई नहीं। क्लब फेडरेशन जैसा रहता है मौलिक इकाई व्यक्ति रहता है। व्यक्ति के सुख के लिए क्लब है तो यह एक रचना कैपिटलिज्म के अन्तर्गत निर्माण हुई और दूसरी रचना निर्माण हुई कि सब कुछ सरकार, व्यक्ति कुछ नहीं, केवल सरकारी मशीनरी के पुर्जे के रूप में, नट व बोल्ट के रूप में। इस तरह का दूसरा माडल वहाँ निर्माण हुआ। भौतिकवादी होने के कारण दोनों अतिवादी हैं—एक का क्लब का माडल है दूसरे का मशीन का माडल है।

हमारे यहां समन्वय

हमारे शास्त्रों ने कहा कि यह दोनों अतिरेक गलत हैं। यजुर्वेद में ऐसा बहुत स्पष्ट रूप से कहा है कि जो केवल व्यक्तिवाद को लेकर रचना करते हैं वे अन्धकार में जाते हैं। लेकिन जो केवल समूहवाद को लेकर चलते हैं वे उससे भी अधिक घोर अन्धकार में जाते हैं। दोनों का बराबर समन्वय होना चाहिए, ऐसा विचार अपने यजुर्वेद ने रखा। अब यह जो दोनों का समन्वय है वह हमारे यहां सनातन काल से चलता आया है। हमारे यहां समाज का माडल क्लब का नहीं, मशीनरी का भी नहीं। समाज के लिए पुरुष प्रतीक माना गया। अर्थात् शरीर यह प्रतीक माना गया। इसलिए 'सहस्त्र शीर्षा पुरुष' वगैरह वर्णन हुआ। सम्पूर्ण समाज याने एक शरीर—अलग-अलग व्यक्ति और व्यक्ति समूह माने उसके अवयव। तो शरीर और शरीर के अवयव का जो सम्बन्ध है वह समाज और व्यक्ति समूह का सम्बन्ध होना चाहिए। यह एक तीसरा माडल पश्चिम में उपलब्ध नहीं है। वह सनातन काल से हमारे यहाँ चलता आया। उसमें से क्या-क्या बातें निकलती हैं यह यदि हम देखें तो हिन्दू विचार क्या है इसका पता चल सकता है।

हमने अद्वैत को अन्तिम सत्य माना, तो मनुष्य का हमारे यहां सर्वांगीण विचार हुआ जो केवल भौतिकवादी होने के कारण उनके यहां नहीं

हुआ, यह हम जानते हैं। वहां केवल देह का विचार है। यहां देह, मन, बुद्धि,आत्मा, चारों का विचार है। इसी कारण चतुर्विध पुरुषार्थ का विचार है। इसी कारण यहां सम्पूर्ण विश्व का विचार भी सामग्र्य से है, एकात्म है। पश्चिम का विचार भौतिकवादी होने के कारण (Compartmentalised) खण्डात्मक है। हमारा Integrated है वह भी बात हम लोग जानते हैं। दीनदयालजी ने एकात्म मानववाद की बात कही है। इसमें से एक-एक बात को हम यदि लेंगे तो हिन्दू विचार और पश्चिम के विचार पद्धतियों में हमें अन्तर दिखाई देगा।

कुछ व्यावहारिक पहलू

बहुत लोग ऐसा सोचते हैं कि यह सब फिलासिफिकल है। व्यवहार्य कैसे होगा ? इस दृष्टि से आज जो कुछ चर्चा के विषय हैं उसमें से एक-दो विषय मैं लेता हूं।

व्यक्तिगत सम्पत्ति को अधिकार के बारे में बहुत चर्चा चलती है। चूंकि हमारे यहां पुरुष का माडल है, हमारे यहां का विचार अलग है। व्यक्तिवादी विचार में यह कहा गया है कि सम्पत्ति का अधिकार अनियंत्रित है। जिसकी जितनी क्षमता है उतना वह करे। कौन इसको रोक सकता है। Lesse faire का सिद्धान्त बताया गया।

सिद्धान्त के रूप में कम्यूनिस्ट स्टेट में किसी को कोई भी व्यक्तिगत सम्पत्ति रखने का अधिकार नहीं। यद्यपि व्यावहारिक रूप में ऐसा वहां नहीं हो पा रहा है।

हमारे यहां कहा गया कि समाज में निर्माण हुए हर एक व्यक्ति को जीविकोपार्जन का अधिकार है और इस दृष्टि से जो जीविकोपार्जन के लिए आवश्यक है वह हर एक को मिलना चाहिए—

यावत् भ्रियेत् जठरम् तावत् स्वत्वं हि देहिनाम्।
अधिकं योऽभिमन्येत् सस्तेनों दण्ड मर्हति॥

जीविकोपार्जन से अधिक रखने का किसी को अधिकार नहीं। जीविकोपार्जन से किसी को वंचित भी नहीं रखा जा सकता। जीविकोपार्जन हर एक को मिलना चाहिए लेकिन साथ ही साथ यह कहा कि समाज का धन बढ़ना चाहिए। इसलिए सबको प्रयास करना चाहिए। तो कहा—

शतहस्त समाहर सहस्त्र हस्त संकिर

सौ हाथों से उत्पादन करना और हजार हाथों से वितरण करना। सम्पत्ति बढ़ाने का भी आदेश दिया। लेकिन जब सारी सम्पत्ति बढ़ जाती है तो उस समय हर एक को चाहे जितनी व्यक्तिगत सम्पत्ति का अधिकार नहीं। व्यक्तिगत सम्पत्ति का अधिकार उतना ही है जितना जीविकोपार्जन के लिए आवश्यक है तो इसका मतलब यह हुआ कि नई परिभाषा में यदि बोला जाए (Capitalistic order unrestrained property' communistic order no private property) पूंजीवाद में अनियंत्रित सम्पत्ति व साम्यवाद में सम्पत्ति का कोई अधिकार नहीं यद्यपि साम्यवाद में व्यवहार में आया नहीं, हमारे यहां (Need, based minimum property) आवश्यकता आधारित न्यूनतम सम्पत्ति है।

अब सवाल इसके बाद का आता है। आज की परिभाषा में उसको बोलते हैं—Surplus value of labour (श्रम का अधिक मूल्य)। श्रम के अधिक मूल्य के अर्थ को संक्षिप्त में ऐसा बताया जा सकता है कि जसे एक आदमी ने एक चीज का निर्माण किया, वह १०० रुपये में मार्केट में बेची जाती है। लेकिन उसको श्रम का मूल्य मिला है १० रुपया। तो मार्क्स और उसके पूर्व विचारकों ने यह कहा कि वास्तव में १०० रुपये मिलते हैं मार्केट में उस चीज के। उसके परिश्रम का मूल्य यह सारे १०० रुपये उसको मिलने चाहिए। लेकिन उसको १० रु० दिया जाता है, बीच में जो ९० रुपये का अन्तर है इसे श्रम का अधिक मूल्य मानेंगे और उन्होंने कहा कि पूंजीवाद में श्रम का अधिक मूल्य मालिक के पास जाता है। उस मात्रा में मजदूर का शोषण हो रहा है।

साम्यवाद में श्रम का अधिक मूल्य मजदूर को नहीं मिलता, वहां भी

उसको वेतन ही मिलता है, लेकिन श्रम का अधिक मूल्य कम्यूनिस्ट शासन में सरकार के पास जाता है।

मार्क्स ने श्रम के अधिक मूल्य को जिस तरह से रखा वह गलत ढंग है यह कम्यूनिस्ट भी मानते हैं। केवल मजदूरों के श्रम के फलस्वरूप ही उत्पादन सारा नहीं होता, उसमें कई चीजें आती हैं। टेकनोलाजी आती है आदि ।

श्रम का अधिक मूल्य समाज-कल्याण के लिये

किन्तु आज भी जसी परिस्थिति में जो श्रम का मूल्य है, और श्रम के फल का मूल्य है हमारे यहां प्राचीन काल में यह कहा गया—

कर्मण्येवाधिकारस्ते, माफलेषु कदाचन।
मा कर्मफल हेतुर्भूमाते सङ्गोऽस्त्व कर्मणि ॥

कर्म जो तुम करते हो उसके मूल्य पर तुम्हारा अधिकार है। कर्म का जो फल है याने जो सम्पूर्ण उत्पादन है उस पर तुम्हारा अधिकार नहीं। यह सबको कहा गया। मालिक वगैरह तो उस समय नहीं थे, जो-जो कर्म करने वाले हैं सबको कहा गया है कि कर्म का जो मूल्य है उसी पर तेरा अधिकार है। तुम्हारे कर्म का जो फल है उसका जो मूल्य है उसपर अधिकार नहीं है। तो कर्म के फल के मूल्य में से अगर कर्म का मूल्य घटा दें तो उसे श्रम का अधिक मूल्य कहा जाता है। इस श्रम के अधिक मूल्य का विनियोग कैसा हो ? तो यह स्पष्ट कहने के बाद कि तुम्हारे कर्म के मूल्य पर ही तुम्हारा अधिकार है, और जो बच जाता है, कर्मफल का बाकी जो मूल्य है, उसके विषय में हमारे यहां तरह-तरह की बातें बताई गई। क्योंकि संस्कार दिये गये थे, धर्म के संस्कार थे तो यह कहा गया कि यज्ञ करना चाहिए, दान करना चाहिए दान यानी जिसको आज (Social welfare activities) सामाजिक सेवा के कार्य कहते हैं और यज्ञ का मतलब होता है (Re-investment for joint production) संयुक्त उत्पादन हेतु श्रम करना, कर्म का मूल्य छोड़कर जो बाकी अधिक शेष बचता

है--समाज के कल्याण के लिए कुछ उत्पादन कार्य में सारा (Re-invest) पुनः लगाना, —अतः कहा, यज्ञ करना चाहिए, दान करना चाहिए। यह प्रवृत्ति समाज में निर्माण हो तो श्रम का अधिक मूल्य न किसी एक मालिक की, न किसी सरकार की—तो सम्पूर्ण समाज की होगी। किस ढंग से वह समाज की हो सकती है यह भी यज्ञ, दान आदि पद्धति से बताया गया है और तब हिन्दू मनोवैज्ञानिक वायुमण्डल में हिन्दू पद्धति से हिन्दू सामाजिक रचना आ सकती है। यह भौतिकवादी वायुमण्डल में नहीं आ सकता यह भी स्पष्ट है।

तो हम समझ लें कि हमारे यहां आग्रह किस बात का था, बाह्य रचना का आग्रह नहीं, तो आग्रह रहा मनुष्य के मन के संस्कार का। आज पश्चिम में भी संस्कार-विहीनता होने के कारण पश्चिम जितनी प्रगति करता जा रहा है, उतना ही उनके मन में भय निर्माण हो रहा है। बहुत प्रगति हो रही है, साइंस बढ़ रहा है, उनकी टेकनोलाजी बढ़ रही है किन्तु इसके कारण आश्वस्त होने के बजाय भय निर्माण हो रहा है, उनके अच्छे-अच्छे शास्त्रज्ञ कह रहे हैं कि हमारे लोगों के मन पर संस्कार न होने के कारण यदि साइन्स व टेकनोलाजी और बढ़ जाती है तो इसके महान घोर दुष्परिणाम मनुष्यता को भुगतना पड़ेगा। अभी उदाहरण के लिये एक-दो बातें मैं बताऊं कि (Seattle) सियेटिल में अमेरिका के (Genetics) के जो वैज्ञानिक हैं उन्होंने एक नयी गैस बनाने की अनुमति कारपोरेशन से माँगी थी। उनको पूछा गया कि आप क्यों बनाना चाहते हैं ? हमारी एक नया प्रगति पग है, उन्होंने कहा। इसका परिणाम क्या होगा ? यह कह नहीं सकते, हो सकता है— अगर यह गैस लेबोरेटरी से बाहर चली गयी तो, १/३ मनुष्य जाति खतम हो सकती है। कारपोरेशन ने परमीशन नहीं दी, लेकिन वैज्ञानिकों की इच्छा थी कि प्रयोग तो हो जाय, क्योंकि मनुष्य जाति का क्या होगा यह संस्कार मन पर नहीं है। उनके एक अच्छेशास्त्रज्ञ (Dr. Wiener) डाक्टर वाइनर जो (Cybernatics) का जन्मदाता माना जाता है—कहा कि यदि केवल विज्ञान टेकनोलाजी जानने वालों के

हाथ में विज्ञान व टेकनोलाजी के विकास का भवितव्य दिया और उनके ऊपर सांस्कृतिक लोगों का नियंत्रण न रहा तो कैसी भयंकर अवस्था हो सकती है। इसके विषय में उदाहरण दिया। उन्होंने कहा कि प्रगति होगी मनुष्यता की, लेकिन संस्कृति न होने के कारण प्रगति दुष्परिणामकारक भी हो सकती है। उन्होंने एक उदाहरण दिया एक कहानी का। कहानी का नाम है बन्दर का पंजा, कहते हैं कि एक मकान में रात के समय कोई मेहमान आए। सुबह चाय लेते समय उनके जेब में से बन्दर का पंजा मेज पर गिर पड़ा। वहां लड़का, बाप और लड़के की पत्नी—तीन ही परिवार में थे। बाप ने पूछा यह क्या है? कहा बन्दर का पंजा है। पूछा इसका गुण क्या है? तो इसका गुण है कि यह जिसके पास रहेगा उसकी तीन इच्छाएं पूरी होती हैं। लेकिन इतना है कि यह बाद में एक अपशकुन भी है। इसके कारण दुष्परिणाम भी हो सकते हैं। अब बाप के मन में इच्छा थी, कि दो सौ पौण्ड उसको व्यक्तिगत ढंग से चाहिए था। लेकिन प्रगतिशील होने के कारण अपने बेटे से नहीं मांग सकता था, तो उसने सोचा कि यह बन्दर का पंजा ले लें। उसने कहा कि मुझे देते हो क्या? उत्तर मिला कि मैं देने को तैयार हूं लेकिन बेटे ने कहा कि पिताजी काहे के लिए ले रहे हैं, यह तो अपशकुन है। पिता ने कहा कि कुछ नहीं, थोड़ी देर के बाद मैं फेंक दूंगा। दोपहर बाद कोई उनके यहां आया। दरवाजा खोला तो दो सौ पौंड का चेक इनको दे दिया। पिता जी सोचते हैं कि अरे उसका कहना सही था, मेरी २०० पौंड की इच्छा थी, २०० पौंड आ गये—बड़े खुश हो गये उन्होंने हस्ताक्षर कर दिये। यह आदमी जाने लगा, फिर वापस बुलाया—यह २०० पौंड दिये, किन्तु यह किस लिये हैं? किसने भेजे? सारी सर, यह बताने में मुझे बड़ा दुःख होता है कि तुम्हारा लड़का फैक्टरी में मशीनरी पर काम करते-करते कट गया। मजदूरों की क्षति पूर्ति के पहले किश्त का यह २०० पौंड है। अब यह २०० पौंड की इच्छा तो पूरी हुई है लेकिन उसकी कीमत कितनी चुकानी पड़ी

सांस्कृतिक संस्कारों का महत्व

इसलिए डा०वाइनर जो स्वयं वैज्ञानिक हैं साइबरनेटिक्स के जन्मदाता हैं, उन्होंने भी यह कहा कि विज्ञान और टेकनोलाजी पर जो विकास हो रहा है उसके ऊपर सांस्कृतिक मूल्य रखने वाले लोगों की एक समिति होनी चाहिए, उन्होंने उसे (Technological Ombudsmen) तकनीकी समिति कहा और यह कहा कि दोनों का अलग-अलग विचार होना चाहिए। (Technological Know how) तकनीकी जानकारी अलग बात है और (Technological what) तकनीक किसलिए अलग बात है। (Technological Know how) तकनीकी जानकारी का मतलब होता है कि (How to achieve the given purposes?) किसी आवश्यकता को कैसे पूरा करना और (Technological Know what) तकनीक किसलिए का मतलब होता है (what purposes has to be achieved?) कि कौन सी आवश्यकता पूरी हो। इस का नियन्त्रण रहना चाहिए, वरना मनुष्य जाति नष्ट हो जायेगी ऐसा उस वैज्ञानिक ने कहा। तो सांस्कृतिक संस्कारों का जो महत्व है उसके आधार पर ही मानवता चल सकती है, और इस दृष्टि से हमारे यहां सब प्रकार का भौतिक विकास होते हुए भी और जिस समय हम वास्तव में जगत्गुरु की स्थिति में थे उस समय भी सबसे अधिक आग्रह संस्कार की प्रणाली पर रखा गया।

तो उनकी रचना—हमारी रचना, हमारे बिचार—उनके विचार बिल्कुल अलग-अलग हैं—दोनों के (Starting points) प्रारम्भ के बिन्दु अलग-अलग हैं। दोनों के (Approaches) दृटिकोण अलग-अलग हैं। ध्येय (Goals) अलग हैं—तो हमारे ऊपर पश्चिमी बिद्वानों ने जान बूझकर जो गलत संस्कार डाले हैं—उनको धो डालने का काम करना पड़ेगा और फिर अपना कपड़ा स्वच्छ करते हुए तब उसके ऊपर हिन्दू विचारों का नया रंग देना सम्भव होगा '

तुलनात्मक सामाजिक रचनायें—दृष्टिकोण के अन्तर

पक्ष	पूँजीवादी	साम्यवादी	हिन्दू चिन्तन
१ दर्शन	भौतिकवाद	भौतिकवाद	एकात्म मानववाद
२ मनुष्य का रूप	आर्थिक प्राणी	आर्थिक प्राणी	देह,मन, बुद्धि, आत्मा
३ लक्ष्य	व्यक्ति की भौतिक सम्पन्नता	राज्य की भौतिक सम्पन्नता	व्यक्ति का धर्म, अर्थ काम, मोक्ष
४ नमूना	क्लब जीवन	मशीनी जीवन	मानव शरीर
५ अनुशासन व स्वतंत्रता	व्यक्ति को उच्छृङ्खलता की सीमा तक छूट	शासकीय अनुशासन से वैचारिक आबद्धता वाला	उच्छृङ्खलता रहित स्वतंत्रता तथा वैचारिक आबद्धता रहित अनुशासन
६ सम्पत्ति का अधिकार	अनियंत्रित	कोई अधिम नहीं	आवश्यकता आधारित न्यूनतम (यावद् भ्रियेत जठरम्)
७ कार्यपद्धति	शोषण	शासन द्वारा शनैः शनैः जब्ती	यज्ञ, दान
८ प्रमुख भाव	व्यक्तिवाद	राज्य सत्तावाद	अंगांगीभाव
९ प्रक्रिया	स्पर्धा की भावना	जबरदस्ती	सहयोग
१० ढांचा	बहुदलीय जनतंत्र	एकदलीय तानाशाही	धर्मराज्य
११ श्रम के अधिक मूल्य का मालिक कौन	मालिक	राज्य	समाज
१२ रोजगार व्यवस्था	रिक्त स्थानानुसार	राज्य निर्देशित	प्रवृत्ति—अनुसार
१३ विचार प्रक्रिया	खण्डात्मक	खण्डात्मक	समग्र

हिन्दू राष्ट्र–नये परिप्रेक्ष्य में

(मा० सुदर्शन जी)

नए परिप्रेक्ष्य में बिचार आवश्यक

जब संघ का कार्य प्रारंभ हुआ था तब से लेकर आज तक का परिप्रेक्ष्य बदल चुका है। तब देश परतंत्र था इसलिये देश के लिये स्वतंत्रता हमारा लक्ष्य था। आज हम स्वतंत्र हैं, इसलिये देश का सर्वांगीण विकास—यह हमारे सामने लक्ष्य है। इसलिये तब जिस तरह की मनोरचना चाहिये थी, जिस प्रकार की तैयारी चाहिये थी, उससे भिन्न प्रकार की मनोरचना, भिन्न प्रकार की तैयारी आज आवश्यक है। हिन्दुराष्ट्र के सम्बंध में हम तब जैसा बोलते थे, जिन शब्दों में बोलते थे, आज हमें भिन्न शब्दों में बोलना होगा। क्योंकि इस बीच में इस राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में भी इतने भिन्न-२ प्रकार के अनुभव आये हैं विद्वानों में भी इस सम्बन्ध में इतनेभिन्न-२ प्रकार के मतभेद हुये हैं, और अपने देश की परिस्थिति में भी इतना कुछ परिवर्तन हुआ कि उन सबको ध्यान में रखकर हमें आज अपने उस हिन्दू राष्ट्र—सिद्धांत के सम्बन्ध में नये प्रकाश में, नई भाषा में, नये शब्दों में, विचार करना होगा ताकि आज की परिस्थिति में वह हमको उपयुक्त लगें।

हमारी उन्नति का कारण हिन्दू राष्ट्र के सिद्धांत पर आस्था

हिन्दुराष्ट्र का सिद्धांत हमारे लिये आस्था का विषय है। हमारी दृढ़ आस्था इस सिद्धांत के ऊपर है इसीलिये हमने वह सब कुछ पाया है

जिसके लिये आज संघ की प्रशंसा होती है । हमारे स्वयंसेवकों की कर्मठता, इमानदारी, प्रामाणिकता, हमारे स्वयंसेवकों का अनुशासन, देशभक्ति, जिसकी लोग प्रशंसा करते हैं वह सब हमने इस 'हिन्दु-राष्ट्र' सिद्धांत पर दृढ़ आस्था के कारण पाया है। हम वर्षानुवर्ष से काम कर रहे हैं क्यों ? एक लक्ष्य है-- इस हिन्दुराष्ट्र का सर्वांगीण विकास करेंगे । दिल्ली में एक बार संघ शिक्षा वर्ग में श्री जयप्रकाश नारायण जी आये थे, और कुछ शिक्षकों की बैठक हुई । उसमें जब परिचय का कार्यक्रम हुआ तो किसी ने कहा 'कि मैं ३० साल से संघ का कार्य कर रहा हूं, किसी ने कहा 'मेरी संघ आयु १५ साल, किसी ने कहा कि २५ साल है ।' यह सब सुनने के बाद जयप्रकाश जी ने पूछा कि "मैं सार्वजनिक जीवन में इतने वर्षों से रहा हूं तो देखता हूं कि कोई सालभर काम करता है, कोई ६ महीने काम करता है, चार महीने करता है, और ठंडा हो जाता है । आप लोग २५-२५, ३०-३० साल से काम कैसे करते हैं ?" अपने एक कार्यकर्ता ने उत्तर दिया, क्योंकि हमारे सामने लक्ष्य है कि 'हम हिन्दुराष्ट्र का पुनर्निर्माण करेंगे ।'

और यह बात सच है कि कितने वर्ष हो गये ? चल रहा है हमारा काम । तो यह जो आस्था है जिसके बलबूते पर हमने सब कुछ पाया है, उस हिन्दू राष्ट्र के सिद्धांत को हमको फिर से परखना है । यह भी सत्य है कि जिस सिद्धांत के बलबूते पर हमने सब कुछ पाया है, आज सबसे अधिक टीका भी उसी सिद्धांत के ऊपर होती है । और यह स्वाभाविक है-- क्योंकि जो हमारा आधार है, जो हमारी नींव है— हमारे विरोधी लोग सोचते हैं कि इस नींव को अगर तोड़ दिया, अगर खिसका दिया जाये, तो इनकी सारी की सारी इमारत ढह जायेगी । इसलिये हिन्दूराष्ट्र के ऊपर ही सबसे ज्यादा टीका होती है । 'तुम साम्प्रदायिक हो, तुम दकियानूसी हो, पुराणपंथी हो,' यह सारे के सारे विशेषण हमको प्राप्त होते हैं क्योंकि हम हिन्दुराष्ट्र की बात बोलते हैं ।

प्रश्न यह है कि यदि हम यह चाहते हैं कि हमारा स्वयंसेवक इन

सारी आलोचनाओं के सामने भी अडिग होकर, विश्वास के साथ खड़ा रहे, और केवल खड़ा न रहे तो अपने उस दृढ़ विश्वास के आधार पर आजूबाजू के सारे समाज में भी इस सिद्धांत के प्रति आस्था पैदा करे तो यह अत्यंत आवश्यक है कि इस हमारे 'हिन्दुराष्ट्र के सिद्धांत' के प्रति तर्क-शुद्ध चिन्तन के आधार पर उसकी आस्था को हमें पुष्ट करना चाहिये। तर्क से, विचार से हमारा सिद्धांत कैसे ठीक है ? यह उसको समझना चाहिये। जैसे परमपूजनीय श्री गुरुजी कहते थे कि हिन्दूराष्ट्र का सिद्धांत त्रिवार सत्य है। तर्क की दृष्टि से भी सत्य है, इतिहास की दृष्टि से भी सत्य है, अनुभूति की दृष्टि से भी सत्य है। तीनों ही प्रकार की बातें अपने स्वयंसेवक के अन्दर उत्पन्न हो, तीनों प्रकार से उसके अन्दर अनुभूतियां उत्पन्न हों, इस बात की नितांत आवश्यकता है।

तो इस रीति से हिन्दुराष्ट्र के सिद्धांत का हम जितना मनन करेंगे, जितनी गहराई में जायेंगे, उतना ही हम स्वयं भी दृढ़ हो सकेंगे और अपने स्वयंसेवकों के मनों में भी उसी प्रकार की आस्था का निर्माण कर सकेंगे। इसलिये इस राष्ट्र--हिन्दूराष्ट्र--इसके सम्बन्ध में हम विचार करें।

राष्ट्रीयता का प्रथम विचार

आज जो राष्ट्रीयता का विचार है, इसके ऊपर गहन अध्ययन, वास्तव में तो प्रथम महायुद्ध के बाद से प्रारंभ हुआ। इसका आविर्भाव हम फ्रांस की राज्यक्रान्ति के पश्चात् मान सकते हैं। फ्रांस की राज्यक्रान्ति के पूर्व योरुप के अन्दर अनेक नये विचार आये। अनेक सुधारवादी, पुनरुत्थानवादी आन्दोलन प्रारंभ हुये। उनके गर्भ में से नये विचार, नई दिशाएँ, नये दृष्टिकोण, नए जीवनमूल्य प्रकट हुये। उसी समय यंत्रयुग के आविर्भाव के कारण भी कहीं रेलगाड़ियां पैदा हुईं, आवागमन के साधन पैदा हुये, नई, चीजें पैदा हुईं। इसके कारण सारी की सारी भौतिक व्यवस्थाओं के अन्दर, वाणिज्य के अन्दर, व्यवसाय के अन्दर एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। युद्ध की पद्धति में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये। और इस

दृष्टि से एक नई प्रकार की उथल-पुथल सारे योरुप के देशों में हुई। उसी में से यह फ्रांस की राज्यक्रान्ति, जिसमें से कुछ नये तत्व—समता, स्वतंत्रता, बन्धुता— (Equality, Liberty, Fraterinity,) इस प्रकार के यह सिद्धान्त पैदा हुये, जिसके बाद एक 'जनतन्त्र' नाम का नया सिद्धान्त और उसके आधार पर नई व्यवस्था दुनिया ने देखी। तब से ही इस 'राष्ट्रीयता' के सम्बन्ध में विचार प्रारम्भ हो गया था किन्तु जोर जो आया है वह प्रथम महायुद्ध के पश्चात् आया। उस समय तो जब लोगों ने प्रारम्भिक रूप से विचार किया तो 'राष्ट्रीयता' की बड़ी सरल सी परिभाषा थी। एक देश है, एक जाति है, एक धर्म है, एक वंश है, एक इतिहास है, बस इसको मिलाकर राष्ट्र बन जाता है—ऐसी उन्होंने एक सरल सी परिभाषा दी।

राष्ट्रीयता की अवधारणा बड़ी जटिल है

लेकिन धीरे-धीरे यह बात सामने आने लगी कि यह परिभाषा ठीक नहीं है। इस परिभाषा के आधार पर हम दुनिया के सब राष्ट्रों को परख नहीं सकते। इस परिभाषा की कसौटी पर सबको कस नहीं सकते। और जैसे-जैसे हमारा अनुभव बढ़ता गया त्यों-त्यों हमको पता लगा कि 'राष्ट्रीयता' का विषय इतना जटिल है, इसकी संकल्पना, इसकी अवधारणा इतनी जटिल है कि इसको एक सामान्य परिभाषा में बांधना बड़ा कठिन है। क्योंकि अगर किसी एक बात को मानो तो उस बात को असिद्ध करने वाली दस चीजें पैदा हो जाती हैं अगर हम मानें कि एक देश—यह राष्ट्रीयता का पोषक है, तो हमको दिखता है कि जो कुछ लोग हैं कि एक देश है, लेकिन एक देश होने के बावजूद इसमें दो राष्ट्र हैं, एक (Czechs) है एक (Slav) है और दोनों अपने को अलग समझते हैं और आज इस प्रकार की माँग जेकोस्लोवाकिया में उठ रही है कि हमारा स्लाविक राष्ट्र अलग होना चाहिये। हम इधर देखें, जापान इसके चार द्वीप हैं लेकिन फिर भी जापान एक राष्ट्र है लेकिन जिसको हम Great Britian कहते हैं

उसके दो द्वीप हैं लेकिन दो द्वीप होने के कारण दो राष्ट्र हैं। जिसको आज हम इंग्लैंड कहते हैं, इस इंग्लैंड के अन्दर Scotland अलग है England अलग है Wales अलग है, इसमें भी एक अलगाव की भावना दिखाई देती है।

अगर हम भाषा को आधार मानें, तो हम देखते हैं कि अमेरिका और कनाडा की भाषा अंग्रेजी होने के बावजूद भी, एक राष्ट्र नहीं है। अरब देशों की भाषा एक है, किन्तु फिर भी अरबस्थान के अन्दर हम कितने अलग-अलग राष्ट्र देखते हैं। सऊदी अरेबिया है, यमन है, अबूधावी है, इराक है, लीबिया है, सीरिया है—सब अरब राष्ट्र हैं, लेकिन सब अलग-अलग हैं। तो भाषा भी एक आधार नहीं बनता।

अगर धर्म को आधार मानें तो उसमें भी हमें दिखाई देता है कि यह भी सत्य नहीं है। इस्लामी राष्ट्रों को लें। इस्लाम इसी आधार पर चला कि राष्ट्रीयता कुछ नहीं है, दुनिया के सारे मुसलमान—ये एक ही बिरादरी के हैं—लेकिन हम देखते हैं कि इस्लाम में भी विभाजन हो गया। स्वयं जब अरब लोग इस्लाम के विजय का झण्डा लेकर चारों तरफ जीतने के लिये निकले और इराक में जब पहुंचे तो उनको ऐसा लगा कि हम तो इस्लाम के झण्डा-वाहक हैं। हम श्रेष्ठ हैं क्योंकि हम हजरत मोहम्मद के साथ प्रत्यक्ष रहे हैं और ये जो नव धर्मान्तरित लोग हैं ये हमसे कम दर्जे के हैं इसलिये उनको मवाली नाम की संज्ञा दी गयी और उनसे भिन्न प्रकार का व्यवहार किया गया। लूट का जो माल होता था उसमें से उनको कम चीज दी जाती थी तो उनके मन में पैदा हुआ कि हमसे भेदभाव किया जाता है और इसलिये ईरान के अन्दर एक नये प्रकार के राष्ट्रवाद का उदय हुआ। हम अरबों से अलग हैं। यह बात पैदा हुई। यद्यपि अरबों ने ईरान को जीत तो लिया लेकिन ईरानियों को लगा कि ये सब अरब लोग हमको अपने से छोटा समझते हैं, हमको अपने से भिन्न समझते हैं इसलिये उनके मन में भी एक प्रतिक्रिया पैदा हुई। यद्यपि अरब लोग सुन्नी पंथी थे किन्तु ईरानी लोगों ने शिया पंथ को स्वीकार करके इस्लाम

को एक नया रूप दिया। ईरान के अन्दर जो पारसी मत था उस मत की अनेक मान्यताओं को इस्लाम से जोड़कर, इस्लाम का एक नया स्वरूप प्रस्तुत किया, जिसकी अन्तिम परिणिति सूफी पंथ के रूप में हुई। यही नहीं तो उनके पहले के जो पूर्वज थे—सोहराब, रुस्तम, बहराम, जमशेद इन सारे लोगों को भी इन्होंने स्वीकार कर लिया, जो मुसलमान नहीं थे उनकी एक अलग राष्ट्रीयता वहां पर विकसित हुई। तुर्की के अन्दर, मुस्तफा-कमाल पाशा जब आया तब उसने यूरोपियन सभ्यता का इस्लाम के साथ मिश्रण करके, एक नयी तुर्की सभ्यता को जन्म दिया। इतना ही नहीं उसने कुरान का अनुवाद तुर्की भाषा में करवाया, और लोगों से कहा कि तुम अल्ला मत बोलो क्योंकि अल्ला ये अरबी शब्द है, तुम तारी, बोलो। उसने तुर्की भाषा में नमाज पढ़वाने का प्रयत्न प्रारम्भ करवाया। तो मुसलमान होने के बाद भी तुर्की की राष्ट्रीयता अलग, ईरान की राष्ट्रीयता अलग, मिश्र की राष्ट्रीयता अलग, इण्डोनेशिया की राष्ट्रीयता अलग है। वास्तव में देखा जाये तो एक धर्म भी सब कुछ जोड़ने में सहायक नहीं हुआ।

यही बात ईसाई मत के बारे में है, यही बात कम्युनिस्टों के बारे में भी है। वे चले थे—'दुनिया के मजदूरों एक हो और अपनी गुलामी समाप्त करो' और यह सोचा था कि दुनिया भर के जितने मजदूर हैं, उनका हित एक होने के कारण कम्यूनिस्ट देश आपस में लड़ नहीं सकते। लेकिन आज का हमारा अनुभव दिखता है कि रूस और चीन लड़ रहे हैं, अलबानिया और रूस लड़ रहे हैं, चीन और वियतनाम लड़ रहे हैं 'जितने भी कम्यूनिस्ट देश हैं वो सब आपस में एक दूसरे से लड़ रहे हैं। इसलिए एक आर्थिक-सामाजिक व्यस्वथा या एक धर्म यह भी जोड़ने के लिये कारणीभूत नहीं है।

वंश की बात लेकर चलें, तो जापान के अन्दर रहने वाले, चीन के अन्दर रहने वाले, मंगोलिया के अन्दर रहने वाले--ये सब लोग एक ही मंगोलि-यनबंश के हैं। उनमें से कोई भी हमारे हिन्दुस्थान में चला आया तो हम सब उसे चीनी या जापानी ही बोलेंगे। लेकिन फिर भी चीनी अलग हैं, जापानी अलग हैं, वियतनामी अलग हैं, उनमें भेद है। दूसरी ओर हम हिन्दुस्थान

के अन्दर देखते हैं तो हिन्दुस्थान के अन्दर अनेक वंश के लोग हैं। यहां तो लम्बी नाक वाले भी हैं, चपटी नाक वाले भी हैं, ऊंचे भी हैं, नीचे भी हैं, काले भी हैं, और गोरे भी हैं। सब प्रकार के लोग हैं फिर भी अनेक वर्षों से हम अनुभव करते आ रहे हैं कि हम एक राष्ट्र हैं। तो वंश को भी उसका निर्णायक नहीं माना जा सकता। एक प्रकार का अनुभव एक तरफ मिलता है, तो दूसरी प्रकार का अनुभव दूसरी तरफ मिलता है और इसलिए इस विषय के सम्बन्ध में विद्वानों में बड़ा मतभेद उत्पन्न हो गया और किसी सामान्य परिभाषा के ऊपर पहुंचना एक कठिन बात हो गयी है।

एक 'हम भावना' राष्ट्रीयता की अनिवार्य शर्त

इसलिये आज के विद्वान जब राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में बोलते हैं तो वे संभल करके बोलते हैं। वे भी एक परिभाषा नहीं बताते, कुछ संभावनायें बताते हैं। किन्तु एक बात पर सब लोग एक मत हैं। कि राष्ट्रीयता के लिये एक 'हम भावना' आवश्यक है। एक मानव समूह के अन्दर एक 'हम' भावना होती है कि इस समूह के अन्दर जितने लोग हैं। वे सब हमारे हैं, अपने हैं। और इसके बाहर के जो लोग हैं वे सब दूसरे हैं। इसको उन्होंने अंग्रेजी में वी फीलिंग (हम भावना) कहा है। तो इस प्रकार जो 'हम भावना' है, यह राष्ट्रीयता की अनिवार्य शर्त है। इस के ऊपर कहीं भी आक्रमण होता है, किसी व्यक्ति पर भी आक्रमण होता है, तो सब लोगों को ऐसा लगता है कि हम पर आक्रमण हुआ है। जसा कि अपने देश के ऊपर चीन के आक्रमण के समय हुआ। अपने देश में अनेक ऐसे लोग थे जो कहते थे, कि हमारा अलग राष्ट्र है, तमिलनाडु के अन्दर डी०के० व डी०एम०के० के लोग कहते थे तमिलनाडु स्वतन्त्र राष्ट्र है, लेकिन चीन का आक्रमण होते ही अन्नाद्रमुक ने सबसे पहले कहा 'कि भारत के ऊपर आक्रमण, हम पर आक्रमण है, इसलिए इस आक्रमण को रोकने के लिए हम हिमालय में जाकर इसकी रक्षा करेंगे।' तो इस प्रकार हम अलग हैं, ऐसा कहने के बावजूद भी उनके अन्दर यह

भाव है कि हम एक हैं। अगर हमारे यहां का कोई आदमी पराक्रम का कार्य करता है तो हम सब लोगों को ऐसा लगता है कि जैसे हमने ही पराक्रम किया है।

स्वामी विवेकानन्द जिस समय पर भारत में आये, मिलने के लिए उनसे देखने के लिए लोग कितनी दूर-दूर से गाँव-गाँव से पैदल चल करके आये, एक बुढ़िया बेचारी अपढ़ थी वह भी लाठी टेकते-टेकते देखने के लिए आई क्योंकि उसको भी ऐसा लगा कि हमारे देश के किसी आदमी ने विदेश में जाकर कुछ पराक्रम किया हुआ है। यह है एक 'हम' की भावना कि हमारे आदमी ने कुछ किया। क्रिकेट हमारा खेल नहीं, लेकिन यदि हिन्दुस्तान जीतता है तो जीतने के बाद हम सब लोगों को आनन्द होता है। हमारे हरगोविंद खुराना हैं, इन्होंने अमेरिकी नागरिकता प्राप्त कर ली, इसलिए उनको जब नोबेल पुरस्कार मिला तो अमरीकन नागरिक को मिला, लेकिन हम, को ऐसा लगा कि नोबेल पुरस्कार हम सब लोगों को मिला है। हरगोविन्द खुराना आखिर हमारा ही तो है—इस कारण यह एक गौरव की भावना हमारे अन्दर जागृत हुई। अभी-अभी की घटना है कि जब मार्गरेट थैचर, इंग्लैण्ड की प्रधानमन्त्री हमारे यहां पर आयीं, तो संसद के अन्दर उनका स्वागत हुआ। राज्यसभा और लोकसभा के सदस्यों ने केन्द्रीय हाल में उनका स्वागत किया, भाषण हुये। भाषण में मार्गरेट थैचर तो अंग्रेजी में ही बोलने वाली थीं लेकिन हमारे यहां के बहुत से सदस्य भी अंग्रेजी में ही बोले पर लोकसभा के अध्यक्ष बलराम जाखड़, ज्यों ही खड़े हुए और उन्होंने हिन्दी में बोलना प्रारम्भ किया, यह देखते ही सारे के सारे लोगों को ऐसा लगा कि हाँ कुछ चीज हमने प्राप्त कर ली और इसलिए (D.M.K.) के लोग जो अपने को हिन्दी विरोधी कहते हैं उन्होंने भी तालियां बजाईं। सबको ऐसा लगा, कि हाँ कुछ हमारी चीज हुई है।

यह जो एक 'हम' भावना है, वास्तव में यह राष्ट्रीयता का मूल आधार है। यह सब लोग मानते हैं।

'हम भावना' का विकास कैसे ?

यह 'हम भावना' कैसे पैदा होती है। अब इसका भी कोई सरल सा उत्तर नहीं। कैसे पैदा होती है ? भिन्न-भिन्न प्रकार के कारण हैं। इसका यदि हम अध्ययन करेंगे तो हर राष्ट्र की 'हम भावना' में भिन्न तत्वों का समावेश हमको दिखाई देगा। किन्तु एक बात पर सब लोग सहमत हैं कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यह अकेला नहीं रह सकता। अन्य प्राणियों का तो ऐसा है कि पैदा होने के बाद अपने आप ही उनमें एक सह-जात भावना रहती है, जिसके कारण वे चलने भी लगते हैं, फिरने भी लगते हैं, दूध भी पीने लगते हैं। कुत्ते का बच्चा पैदा होगा, तो पैदा होने के तुरन्त बाद उसको पता लग जायेगा कि माता का दूध हमको कहाँ से पीना है। लेकिन आदमी का बच्चा पैदा होने के बाद रोता ही रहेगा, जब तक कि माता उसको दूध नहीं पिलायेगी, स्तन उसके मुंह में नहीं डालेगी वह कुछ नहीं करेगा, रोता ही रहेगा। तो मनुष्य पहले ही पर—निर्भर है उसको पैदा होने के साथ ही दूसरे की आवश्यकता लगती है और मनुष्य चूंकि अपने आपको सबसे ज्यादा प्यार करता है इसलिए अपने लिए सहा-यक, अपने जीवन के लिए सहायक जो लोग हैं, उनको अपना मानना शुरू करता है। उपनिषदों में यह वर्णन आता है कि मैत्रेयी और याज्ञ-वल्क्य का संवाद हुआ, उसके अन्दर याज्ञवलक्य ने मैत्रेयी से पूछा कि तुम मुझसे क्यों प्रेम करती हो ? उसने कहा कि क्यों प्रेम करती हूं ? आप मेरे पति हैं इसलिए आपसे प्रेम करती हूं। याज्ञवल्क्य ने कहा नहीं, तुम अपने लिये मुझसे प्रेम करती हो—

न वा अरे पत्युः कामाय पतिः प्रियः भवति
आत्मानस्तु कामाय प्रियः भवति
न वा जायायै कामाय जाया प्रियाभवति
आत्मानस्तु कामाय जाया प्रिया भवति
न वा अरे देवानां कामाय देवाः प्रियाभवन्ति।
आत्मानस्तु कामाय देवा प्रिया भवन्यि॥

कि हमको देवता क्यों कहा ? हमको पति क्यों कहा ? हमको पुत्र क्यों कहा ? इसलिये कि सब हमारे जीवन में सहायक हैं, इसलिये वे सब हमको प्यारे हैं, क्योंकि हम अपने से सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। उन्होंने यह तत्व सामने रखा और इसलिये उन्होंने कहा कि मनुष्य अपने से प्यार करता है इसलिये अपने जीवन के लिये सहायक जितने लोग हैं, उन सबको वह 'हम' मानने लगता है कि ये हमारे लिए सहायक हैं।

राष्ट्रीयता की उत्पत्ति

प्रथम अवस्था के अन्दर मनुष्य का जीवन केवल प्रकृति के भरोसे चलता था, उसी समय मनुष्य को लगा कि यदि हमें जीना है और प्रकृति के भरोसे ही रहना है, तो प्रकृति हमको सहायक भी हो सकती है, और प्रकृति हमारे विपरीत भी जा सकती है। और प्रकृति जब हमारे विपरीत जायेगी तो उससे हमें अपनी रक्षा करनी पड़ेगी, अतः हम अकेले, हमारा परिवार अकेले, रक्षा नहीं कर सकता इसलिए चार परिवार मिलना चाहिये, शिकार यदि करना है तो चार लोग मिलकर जाना चाहिये। उसी समय उन्हें अनुभव हुआ कि जीवन अगर हमको चलाना है, तो हम दस लोगों को मिलकर चलना पड़ेगा इसलिए अनेक परिवार आपस में मिल गये मिल करके उनको ऐसा लगा कि सब मिल करके जीवन व्यतीत करेंगे तो प्रत्येक का जीवन सुरक्षित रहेगा। इस प्रकार अनेक परिवारों का मिल करके एक कबीला बना, एक (Tribe) बना। यह मनुष्य के विकास की पहली सीढ़ी है, जब एक कबीला बना। अब यह जो कबीला था जनजाति थी, इस जनजाति के अन्दर भावना यह होती थी कि "एक के लिये सब, सबके लिए एक।" जन-जाति का एक-एक बच्चा जो था वह सारी जाति की निधि माना जाता था और हर व्यक्ति यह समझता था कि मेरा कबीले के प्रति कर्त्तव्य है। आगे चल करके यह कबीले जो पहले केवल पशुपालन और शिकार के ऊपर निर्भर करते थे जब खेती करना प्रारम्भ कर दिया तो धरती के साथ इनका

सम्बन्ध भी जुड़ा और उन्हें यह भी पता लगा कि यह धरती का भूखंड हमारे लिए अन्न उत्पादन करता है, हमारे पोषण की व्यवस्था करता है, तो उस भूखण्ड के प्रति उनके अंदर प्यार पैदा हुआ । जबसे एक कबीला एक धरती के ऊपर बस करके उस धरती से प्रेम करने लगा वहीं से 'राष्ट्रीयता' का बीज उत्पन्न हो गया । जब से धरती के साथ मनुष्य का सम्बन्ध जुड़ा, वहीं से राष्ट्रीयता की यात्रा प्रारम्भ हुई ।

विकास के साथ राष्ट्रीयता का दायरा बढ़ा

अब खेती अगर करनी है, तो उसके लिये हल चाहिए, तो हल बनाने वाला बढ़ई, फिर उसके लिये लुहार, फिर उसके लिए पशु, और पशुपालन करने वाला व्यक्ति भी हमारे लिए चाहिए । अर्थात् इस खेती के काम को करने वाले जितने लोग हैं वे सब के सब हमारे उस दायरे के अन्दर जुड़ गये । और एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए जिस समय पर चक्के का आविष्कार हुआ, बैलगाड़ी का आविष्कार हुआ तो बैलगाड़ी बनाने वाला यह भी हमारे 'हम' दायरे के अन्दर सिमटता चला गया । जैसे-जैसे मनुष्य का जीवन विकसित होता गया अनेक जीवन की आवश्यकतायें बढ़ती चली गयीं और उन सारी आवश्यकताओं को पूरा करने वाले लोग यह हमारे 'हम' के दायरे में सिमटते चले गये । यह भी हमारा है, यह भी हमारा है, यह भी हमारा है, क्यों ? क्योंकि जीवन जीने के लिये इन सबकी आवश्यकता है । इनके हित-संबन्ध हमारे साथ जुड़े हुये हैं । अब जिन हित सम्बन्धों के भरोसे, हमको ऐसा लगा कि ये सब हमारे साथ जुड़े हुए हैं, वह हित सम्बन्ध केवल भौतिक आवश्यकताओं तक ही सीमित नहीं थे । आगे चलकर देखते हैं कि मनुष्य खाने-पीने में आनन्द लेने लगा तो उसका दिमाग चलने लगा, दिमाग चलने लगा तो अनेक बातों पर विचार करने लगा कि ये दुनिया क्या है ? ये नक्षत्र क्या है ? ये सूर्य क्या है ? ये चन्द्र क्या है, बाकी सारी चीजें क्या हैं ? इन पर जैसे-जैसे विचार होने लगा वैसे नयी-नयी चीजें मिलने

लगी—फिर काव्य का प्रकटीकरण होने लगा, साहित्य का प्रकटीकरण होने लगा। इस काव्य और साहित्य के द्वारा लोगों को आनन्द होने लगा तो काव्य पैदा करने वाला, साहित्य पैदा करने वाला व्यक्ति यह भी उसके 'हम दायरे' के अन्दर जुड़ गया। संगीत करने वाला व्यक्ति भी हमको लगा कि यह हमारा अपना व्यक्ति है। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'हम समूह के अन्दर' वे सारे लोग जुड़ते गये। साहित्यकार जुड़ते गये, कलाकार जुड़ते गये, चित्रकार जुड़ते चले गये, कोई दर्शनकार जुड़ते चले गये। इस वैचारिक विकास में, मानसिक विकास में, आध्यात्मिक विकास में जिन-जिन लोगों का योगदान था वे सब हमारे इसके अन्दर घुसते चले गये।

मन को आनन्द देने वाले, बुद्धि को आनन्द देने वाले, आत्मा को आनन्द देने वाले जितने भी तत्व थे वे सबके सब इसके साथ जुड़ते चले गये। और इस प्रकार यह 'सहयोग समूह' बढ़ता चला गया, व्यापक होता चला गया 'हम समूह' बढ़ता चला गया। हम की भावना बराबर बढ़ती चली गयी। हम देखते हैं कि जिस प्रकार भोजन-पानी आवश्यक है उसी प्रकार आज के प्रगत राष्ट्र के अन्दर साहित्यकार भी आवश्यक है। इंग्लैंड के अन्दर अगर शेक्सपीयर और बर्नार्डशां को निकाल दो, तो इंग्लैंड के आदमी को ऐसा लगता है कि कुछ खो दिया, क्योंकि शेक्सपीयर, बर्नार्डशां भी आवश्यक हैं। जर्मनी के अन्दर गेटे और शोपेनहोवर होना आवश्यक है। फ्रांस के अन्दर रूसो और वाल्टियर आवश्यक है। रूस के अन्दर गोर्की आवश्यक है। उसी प्रकार हमारे यहां पर व्यास हैं, वाल्मीकि हैं, कालिदास हैं—आवश्यक हैं। यह हमारे जीवन के लिए उतने ही आवश्यक हैं जितने हमारे लिए अन्न, पानी और सारा कुछ है। इस प्रकार जीवन की आवश्यकतायें बढ़ने के साथ-साथ यह 'हम' का दायरा भी बढ़ता चला जाता है और इस प्रकार एक 'व्यापक-सहयोग-समूह' बनता है। यह जो एक 'हम' धारणा है, यही जो हम भावना है, यह जो 'व्यापक-सहयोग-समूह' की भावना है, जो हमारी जीवन धारणा के लिए आवश्यक है, यह वास्तव में राष्ट्र की आत्मा होती है। इसी से राष्ट्र

बनता है तो यह जो 'हम भावना' है इस हम भावना को हम राष्ट्र की आत्मा मानकर चलें।

'चिति' ही राष्ट्र की आत्मा

आत्मा अगर नहीं होगी तो राष्ट्र नहीं बनेगा, यह आत्मा आवश्यक है। और यह मनुष्य का सहज विकास है, मनुष्य, परिवार, कबीला, समाज, राष्ट्र। इस प्रकार से राष्ट्र मानव विकास के अन्दर एक महत्वपूर्ण सीढ़ी है। तो 'हम' भावना यह सबसे पहला पक्ष है, यह आत्मा है। इसको मैजिनी ने व हा है 'इण्डीविजुअलीटी आफ पीपुल्स' (Individuality of people) लेकिन अपने यहां तो डा० विपिनचन्द्रपाल जो एक बहुत बड़े नेता हो गये हैं, उन्होंने कहा कि (Individuality) शब्द ठीक नहीं है, भारत का मानव एक अद्वैतवादी मानव है वह इसको वर्णित करेगा तो उसको (Personality of people) बोलेगा। अब (Individuality) और (Personality में क्या अन्तर है, इसपर विचार हम आगे करेंगे इस प्रकार यह एक व्यक्तित्व उभर कर आता है, अहं भावना उभरकर आती है, सारा-का सारा समूह ये एक व्यक्ति के नाते से व्यवहार करना प्रारम्भ कर देता है। यह जो एक व्यक्तित्व है, यह जो एक समूह भाव है, यह जो एक अस्मिता है, या जिसको हमारे यहां कहा है 'चिति' ये राष्ट्र की आत्मा है।

राष्ट्रात्मा की अभिव्यक्ति के लिये देश आवश्यक

लेकिन जैसे प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा होते हुए भी उस आत्मा की अभिव्यक्ति के लिये शरीर लगता है उसी प्रकार प्रत्येक राष्ट्र की आत्मा या चिति उसको भी अपनी अभिव्यक्ति के लिए शरीर लगता है अर्थात् देश लगता है। जैसे बिना शरीर के आत्मा रह सकती है लेकिन प्रकट नहीं हो सकती, प्रकट होना होगा तो उसके लिये शरीर चाहिए ऐसे ही बिना भूमि के राष्ट्र रह सकता है लेकिन अपने आपको अभिव्यक्ति नहीं कर सकता। जैसे लगभग १८०० वर्ष तक

इसराइल इस दुनिया में नहीं था पर हम कहते हैं कि इसराइल राष्ट्र जीवित था लेकिन यह जीवित था यह तब पता लगा जब फिर से १९४८ में इसराइल राष्ट्र अस्तित्व में आया। तब लगा कि यह जीवित है तब तक लोग सोचते थे खत्म हो गया। लेकिन यह भावना जो उन्होंने जिन्दा रखी यह अपने उस देश के बलबूते पर जिन्दा रखी। प्रत्येक यहूदी रोज रात्रि में जिस समय घर में प्रार्थना करता था तो ईश्वर से कहता था कि हे ईश्वर! अगला वर्ष मैं इसराइल के अन्दर बिताऊँ। और वह पढ़ता था कि हमारा इसराइल कैसा देश है? कितना सुन्दर देश है, कैसी नदियाँ हैं? कौन से पहाड़ हैं? किस नदी के ऊपर हमारे कौन प्राचीन पराक्रमी पूर्वजों ने कौन सा कार्य किया। हमारे मनावो ने कौन सा कार्य किया, हमारे तुवाहा ने कौन सा कार्य किया, मोजेज ने क्या कार्य किया, इन सारी बातों की स्मृति रखकर वह अपने मानस पटल पर अपने देश का भव्य चित्र रखता था, उसको अपने मन में संजोता था, पूजा करता था, आशा करता था कि फिर वहाँ जायेंगे और यह १८०० साल तक पीढ़ी दर पीढ़ी यह जो 'हम' भावना थी, कि हम सब यहूदी हैं, इसराइल के हैं, यही राष्ट्र के रूप में जीवित रही। लेकिन अभिव्यक्ति उसको तब मिली जब उनको देश मिला। १७७२ से १७९५ के बीच पोलैंड का तीन बार विभाजन हुआ और तीन बार विभाजन के अन्दर पोलैंड का अस्तित्व समाप्त हो गया किन्तु पोलिश लोगों के अन्दर की हम भावना—हमारा एक देश है, पोलैंड को उस भावना ने १९१४ में फिर से पोलैण्ड को अस्तित्व में लाया और आज जब रूस उसको दबाने का प्रयत्न कर रहा है तो पोलेण्ड की यह जो 'चिति', 'आत्मा' है वह विद्रोह कर रही है।

राष्ट्रीयता को पुष्ट करने के लिये अपनी भूमि के प्रति रागात्मक सम्बन्ध चाहिये

लेकिन यह जो आत्मा है यह भूमि के सहारे से रहती है, इसलिये हम देखते हैं कि प्रत्येक देश के अन्दर, उस भूमि के साथ रागात्मक संबंध

स्थापित करना, यह राष्ट्रीयता का एक महत्वपूर्ण कार्य बन जाता है। प्रत्येक देश के अन्दर अपनी भूमि के बारे में लोगों के अन्दर भावना है। क्योंकि आत्मा अगर शरीर से अभिव्यक्त होने वाली है तो उसकी रक्षा करनी चाहिए इसलिए हमारे यहाँ कहा है 'शरीर माध्यम खलु धर्मसाधनम्'—शरीर की रक्षा करो क्योंकि इसी से सारा धर्म कर्म होगा। उसी प्रकार से राष्ट्र की रक्षा करना है तो देश की रक्षा करनी चाहिए। यह देश भक्ति, देश की रक्षा का भाव, देश के लिये बलिदान का भाव—यह वास्तव में राष्ट्रीयता का महत्वपूर्ण घटक बन जाता है और इसलिये प्रत्येक राष्ट्र ने अपनी राष्ट्रीयता को पुष्ट करने के लिये अपनी भूमि के प्रति एक रागात्मक व भावात्मक सम्बन्ध उत्पन्न करने का प्रयत्न किया। यह हमारी मातृभूमि है, यह हमारी पितृभूमि है, यह हमारी पुण्य भूमि है—यह भावना प्रत्येक देश ने व्यक्त की है। फिर इन भावनाओं को साधारण समाज के अन्दर ले जाने के लिये अनेक साहित्यकारों ने, अनेक कलाकारों ने, कवियों ने काव्य रचे हैं, श्रेष्ठतम काव्य रचे हैं, जिनके माध्यम से लोगों के अन्तःकरण के अन्दर देश की भूमि के प्रति इस प्रकार का एक रागात्मक व भावात्मक अनुराग उत्पन्न करने का प्रयत्न किया। दो-चार उदाहरण देता हूं।

शेक्सपियर—उसने इंगलैंड के बारे में लिखा—

The precious stone set in the silver sea,
Which serves it in the office of a wall,
Or as a moat defensive to a house,
Against the envy of less happier lands,
This blessed plot, this earth, this realm
this England—Shakespeare.

इटली के अन्दर दान्ते महान दार्शनिक हुआ, कवि हुआ—उसने क्या लिखा—

If not the dear land in which we trust
Mother, loving and kind
Who shelters parents brothers sisters and wife

जर्मनी के अन्दर—मौरिड हल्ट नाम का कवि हुआ है। लोगों की राष्ट्र भावना को जगाने के लिये, जब जर्मनी अनेक टुकड़ों में बसा हुआ था तो उसने कहा—

Where is the German's Fatherland
Mainly at length to the Mightyland
Where resounds the German tongue
Where hyms to God are sung

तुर्की के अन्दर जिया भोपट नाम का व्यक्ति हुआ, उसने क्या लिखा ?

My heart desires are two
Religion in Fatherland
Our war is the Holywar
And marked it done.

चीन तो कम्यूनिस्ट हो गया लेकिन कम्यूनिस्ट होने के बाद भी वहाँ पर काव्य कहा जाता है। उसमें क्या कहते हैं ?

We are born in the Communist Party
Take up your Arms
Wc are defending the frontiers of our Motherland
Till our death

जापान के अन्दर चिकायू नाम का उनका एक महान लेखक हुआ है। जापान के बारे में क्या वर्णन करता है—

'जापान एक दिव्य देश है, जिसकी नींव हमारे दिव्य पूर्वजों ने रखी है और जिस पर राज्य करने के लिये सूर्यदेव ने अपने वंशजों को भेजा है। यह बात केवल अपने देश के बारे में ही सत्य है, किसी अन्य देश के बारे में यह बात नहीं पाई जाती यही कारण है कि यह एक दिव्य देश है।'

अपने वैशिष्टय का आग्रह

रोम के अन्दर, उनका साम्राज्य बहुत बड़ा होने के कारण इटली के

अन्दर रोमन केथोलिक चर्च के प्रति एक विशिष्ट प्रकार का आकर्षण है—इटली का प्रत्येक व्यक्ति नागरिक नहीं हो सकता जो केथोलिक नहीं है यहाँ तक कि जो मार्क्सवादी हैं इधर जाकर भाषण देते हैं द्वन्दात्मक भौतिकवाद के ऊपर लेकिन रविवार के दिन चर्च में जाकर प्रार्थना करते-बैठते हैं, इसमें उनको कोई विसंगति नहीं लगती। हमारे यहाँ पर भी चारु मजुमदार हुआ, तो कहते हैं कि उसकी झोपड़ी के अन्दर लेनिन का चित्र था तो दूसरी ओर काली का चित्र था। हमारे माल्दा के अन्दर एक सज्जन हैं वह अपने आपको काली कम्यूनिस्ट कहते हैं वे कम्यूनिस्ट हैं लेकिन वे काली पूजा के समय, दुर्गा पूजा के समय दुर्गा की पूजा जरूर करते हैं—यह कैसे करते हो तो कहते हैं कि हम काली कम्यूनिस्ट हैं।

तो हर देश के अन्दर यह भिन्न प्रकार की चीजें हैं। अमेरिका में जायेंगे तो धर्म आदि का कोई मतलब नहीं। वहाँ पर सामाजिक और आर्थिक व्यवस्थाओं का ज्यादा महत्व है। उन सामाजिक व आर्थिक व्यवस्थाओं के आधार के ऊपर भिन्न-भिन्न राज्य बने और जब उनको लगा कि हमारे ऊपर संकट है तो सब लोगों ने मिलकर, हम एक राष्ट्र हैं, इसकी घोषणा कर दी। यह उनकी प्रमुख भावना है।

भारतवर्ष के अन्दर प्रमुख भावना धर्म रहा। धर्म यानी जो समाज की धारणा करे। उसके अन्दर हमने व्यक्ति, समष्टि, सृष्टि व परमेष्टि सबको स्वीकार किया। व्यक्ति है, समाज है, प्रकृति है, परमात्मा है, इन सबके संयोग से सृष्टि की धारणा होती है, ब्रह्माण्ड की धारणा होती है—इन सबको ध्यान में रखकर हमारे यहाँ पर विचार हुआ। हमने इसे अपने भारतवर्ष का आधार बनाया। आत्मा भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होती है, लेकिन उसके लिये शरीर आवश्यक होता है। वह अपने विकास की प्रक्रिया के आधार पर एक लक्ष्य निर्धारित करती है और लक्ष्य के आधार पर उसका स्वभाव बनता है। इसलिये भारतवासियों के सामने जो लक्ष्य है कि सम्पूर्ण विश्व, ब्रह्माण्ड एक ही आत्मा की अभिव्यक्ति है और इसलिये दुनिया के अन्दर रहने वाले सब लोग एक ही आत्मा के अंग

होने के कारण हमारे ही हैं। इसलिये वसुधैव कुटुम्बकम् का विचार लेकर हम जो रचना रचेंगे और हमारा जो स्वभाव बनेगा वह उस स्वभाव से बिल्कुल भिन्न होगा जो बोलते हैं कि केवल हम सही हैं बाकी सब गलत हैं। इसलिये एक मुसलमान का स्वभाव एक कम्यूनिस्ट का स्वभाव—जो अपने को छोड़कर बाकी सबको गलत मानता है—उसमें और हमसे बहुत बड़ा फर्क रहेगा। अभी जिस समय इंगलैंड में दंगे हुए तो उन दंगों के समय बहुत से भारतीय, एशियाई लोगों पर आक्रमण हुए। भारतवासियों पर कहीं एक दो जगह पर ही आक्रमण हुआ लेकिन पाकिस्तानियों पर बहुत आक्रमण हुआ। तो यह जितने Skin heads थे—सिर मुड़ा कर ऐशियाओं पर हमला करते थे—वे कहते थे कि हम पाकिस्तानी को मारेंगे। अपने कुछ लोगों ने पूछा कि तुम पहचानते कैसे हो कि कौन पाकिस्तानी है कौन हिंदुस्तानी है ? क्योंकि हिन्दुस्तान व पाकिस्तान के लोग जो इंगलैंड में रहते हैं उनको चेहरा देखकर पहचान नहीं सकते कि यह पाकिस्तानी है कि हिंदुस्तानी तो उसने उत्तर दिया कि Pakistani looks cruel पाकिस्तानी जो है वह बड़ा क्रूर दिखाई पड़ता है, हम उसका चेहरा देखकर ही पहिचान लेते हैं कि यह पाकिस्तानी है ? हिन्दुस्तान का आदमी जिसका लक्ष्य है कि सारी दुनिया एक है उसके चेहरों पर का भाव और पाकिस्तानी जो सारी दुनिया को अपना शत्रु मानता है उसके चेहरे पर के भावों में फर्क होता है और इस फर्क के कारण वे पहिचान लेते हैं कि यह पाकिस्तानी है यह हिंदुस्तानी हैं। यह स्वभाव उसके जीवन उद्देश्य के साथ ग्रंथित रहता है।

राष्ट्र-स्वभाव के अनुकूल रचनायें

अब जैसे स्वभाव होता है, प्रकृति होती है, वैसे मनुष्य जीवन को इस भौतिक जगत के अन्दर काम करने के लिए अनेक भौतिक सुख सुविधायें जुटानी पड़ती हैं लेकिन वह भी अपने स्वभाव के अनुरूप जुटाता है। उसी प्रकार राष्ट्र भी भौतिक सुख-सुविधा के लिए जो अनेक चीजें इकट्ठी करता है वह अपने स्वभाव के अनुसार इकट्ठी करता है, अपनी प्रकृति के अनुसार

एकट्ठा करता है । जैसे किसी आदमी का स्वभाव अगर पूजा-पाठ का होगा तो वह ऐसी चीजें इकट्ठी करेगा जो कि पूजा-पाठ में सहायक हो सकती है तथा पूजा-पाठ के लिए मानसिक वातावरण बना सकता है। उसके घर में जाकर देखेंगे तो भगवान के चित्र रखे होंगे । कोई अगर वीरता की उपासना करने वाला होगा तो उसके यहाँ राणाप्रताप के चित्र होंगे, शिवाजी के होंगे, गुरु गोविंद सिंह के होंगे, कहीं बंदा बैरागी के होंगे—इसी प्रकार के चित्र होंगे । कोई व्यक्ति अगर सिनेमा नट-नटनी की उपासना करने वाला होगा तो उसके यहाँ उसी प्रकार सिनेमा के तारिकाओं के चित्र लगे रहेंगे । हर व्यक्ति का अपना जो स्वभाव है उसके अनुसार वह सारी चीजें जुटाता है । राष्ट्र का भी ऐसा है कि राष्ट्र का जो स्वभाव होता है उसके आधार पर वह अपनी भिन्न-भिन्न प्रकार की संस्थायें प्रगट करता है । वह संस्थायें, चाहे राजनीतिक हो, धार्मिक हो या सामाजिक हो—उस राष्ट्र की प्रकृति के अनुरूप आगे चलती हैं । दुनिया में अगर रहना है तो राज्य कैसा रहेगा ? यह भी हर राष्ट्र की प्रकृति के आधार पर होता है ।

पश्चिम का विचार अधिकार में से उत्पन्न—अन्तःसंघर्ष

आज हमको अपने देश के अन्दर जो गड़बड़ मालूम होती है उसका कारण यह है कि हमने जो संस्थायें ली हैं, वह विदेशों की ली हैं—योरुप की ली हैं । जनतंत्र लिया है उनकी पार्लीमेंट डेमोक्रेसी ली है, लेकिन हमारा स्वभाव भिन्न प्रकार का है और इसलिये वहाँ की जो संस्थायें हैं वह इसके साथ जुड़ती नहीं हैं । इसलिए आज हमको अपने यहाँ के समाज में एक प्रकार का संघर्ष दिखाई देता है । क्योंकि पश्चिम की जितनी संस्थायें हैं यह संघर्ष में से पैदा हुई हैं । यहाँ पर वह शब्द आता है—Personality and Individuality डा० विपिन चन्द्र पाल कहते हैं कि अन्तर क्या है ? उन्होंने कहा कि योरुप के अन्दर जितना भी विचार हुआ वह अधिकार में से आया—My Right मेरा अधिकार—इस भावना में से । Liberty,

Equality के आधार पर सारे बिषय चले। और इसलिये उन्होंने व्यक्तित्व पर जोर दिया, याने Individuality पर जोर दिया, यह Individuality और Personality के लिए हमारे यहाँ अलग-अलग शब्द कौन से होंगे यह ढूंढ़ना कठिन है। हम कह सकते हैं अहम्भाव या अहंकार, केवल मैं हूं, मुझे बाकी से कोई मतलब नहीं। तो उनका कहना है कि यह जो Individuality है, अहम्न्यता है, यह अपने को अलग समझती है। यह सोचती है कि बाकी सारे लोग हमारे विरोध में षड़यंत्र कर रहे हैं और इसलिए अगर मुझे जीना है तो इनसे संघर्ष करके जीना पड़ेगा। यह भाव इस Individuality के अन्दर आता है। और पश्चिम का जो सारा विचार है, Equality का विचार हो, चाहे Liberty का विचार हो—इसमें से पैदा हुआ है। अब वहाँ के लोगों को भी पता लगा कि समाज की धारणा करना हो तो व्यक्ति को केवल व्यक्तिवादी बनाना, अहमवादी बनाना, इतना केवल पर्याप्त नहीं है तो उसके अहं पर अंकुश रखने के लिए कुछ और करना पड़ेगा। तो Fraternity या भ्रातृत्व को उसके साथ जोड़ दिया। लेकिन विपिन चन्द्र पाल का कहना है कि Liberty और Equality का सिद्धांत है उसके साथ यह Fraternity का सिद्धांत मेल नहीं खाता क्योंकि Fraternity का विचार उस Liberty Equality के विचार का 'तर्कशुद्ध परिणाम'—इस नाते से प्रस्तुत नहीं हुआ। ऐसा लगता है जैसे बाहर से जोड़ दिया गया हो? और इसलिए हम देखते हैं कि पश्चिम के देशों में जहाँ Liberty और Equality ने आपस के अनेक संघर्ष खड़े किये वहीं यह जो भ्रातृत्व का भाव था, जो इनके बीच में सामंजस्य स्थापित करने के लिए लाया गया था, वह सामंजस्य स्थापित नहीं कर सका, वह कोई ऐसा आधार प्रस्तुत नहीं कर सका जिस पर मनुष्य एक सामूहिक जीवन, एकता का जीवन व्यतीत कर सके। मैंजिनी ने इस बात को पहचाना था, उन्होंने कहा था कि फ्रांस की जो राज्य क्रांति हुई है उस राज्य क्रांति के प्रभाव से अपने आपको मुक्त करो। लेकिन वह स्वयं भी Latin christianity के प्रभाव के अन्दर था और इसलिए वह भी पूरी तरह से मुक्त नहीं हो सका।

इसलिए राष्ट्रीयता का एक ऊँचा विचार जो मनुष्य को जोड़ने में कारणीभूत हो सकता है वह नहीं दे सके। इसलिए उन्होंने कहा कि यह Individuality शब्द ठीक नहीं है—Personality होना चाहिए। इसमें क्या फर्क है ? उन्होंने कहा कि यह जो Latin शब्द है यह Persona शब्द से निकला है, जिसका अर्थ होता है मुखौटा, जिसे अंग्रेजी में Mask कहते हैं। अब यह जो मुखौटा आदमी पहनता है तो काहे के लिए पहनता है तो जरा भिन्न प्रकार से दिखे। जैसे नाटक के अन्दर कोई आदमी हनूमान जी का मुखौटा लगाकर अपने को हनूमान कहता है तो वास्तव में वह हनुमान नहीं होता है तो उनका कहना है कि यह जो Personality है यह भिन्न-भिन्न प्रकार के मुखौटे हैं लेकिन उनकी आन्तरिक एकता एक है। एकता एक है यह मुखौटों से बाधित नहीं होगी और इसलिए Personality कहने पर इस आन्तरिक एकता पर कोई चोट नहीं पहुंचती। हमारे यहाँ पर यह जो अस्मिता शब्द है, व्यक्तित्व का शब्द है इसके अगर कोई निकटतम शब्द हो सकता है तो Personality हो सकता है। या इसे हम अस्मिता कह सकते हैं। तो इस प्रकार से इन दोनों में फरक है क्योंकि उनकी धारणा और हमारी धारणा में भी फरक है इसलिए जितनी संस्थायें उन्होंने पैदा की उन सारी संस्थाओं के अन्दर हम संघर्ष, संघर्ष, संघर्ष देखते हैं। वे व्यक्ति और समाज में संघर्ष देखते हैं, समाज और प्रकृति में संघर्ष देखते हैं वे प्रकृति को Exploit करते हैं।

हमारे यहाँ सब जगह समन्वय का विचार

हमारे यहाँ प्रकृति का दोहन होता है, प्रकृति हमसे संघर्ष करने के लिए नहीं है। हम सबमें समन्वय देखते हैं वे सबमें संघर्ष देखते हैं और इसलिए उनकी जितनी संस्थायें संघर्ष पर आधारित हैं वे जब हम अपने यहाँ पर लाते हैं तो अपने यहाँ पर भी वह संघर्ष दिखाई देता है। हमारे यहाँ कर्तव्य के ऊपर ज्यादा जोर था अधिकार पर नहीं, लेकिन आज हम देखते हैं हमारे यहाँ अधिकार की बात अधिक होने के कारण हमारे यहाँ

भी संघर्ष की बात आ गयी। इस प्रकार पाश्चात्य चीजें यहाँ पर ला रहे हैं तो वह हमारी इस प्रकृति से मेल नहीं खाती हैं अतः एक प्रकार का असामंजस्य हमको दिखाई देता है। प्रत्येक राष्ट्र को अपनी प्रकृति के आधार पर अपनी सभ्यता विकसित करनी पड़ती है, अपनी संस्थायें विकसित करनी पड़ती हैं, अपनी राज्यसत्ता विकसित करनी पड़ती हैं, अपने जो भौतिक भिन्न-भिन्न प्रकार के साधन हैं अपनी सुविधा के अनुसार अपनी प्रकृति के अनुसार विकसित करने पड़ते हैं। तो इस प्रकार से प्रत्येक राष्ट्र, के अन्दर एक 'हम' भावना होती है, और उस 'हम भावना वाले समूह' का एक 'भूमि' के साथ में तादात्मक और भावात्मक सम्बन्ध होता है और उसकी एक 'प्रकृति' होती है, उसकी एक 'संस्कृति' होती है उसका एक 'स्वभाव' होता है उसकी एक 'सभ्यता' होती है। ये सब से मिलकर राष्ट्र अस्तित्व में आता है। इस रीति से हम अपने भारतवर्ष का विचार करके देखें तो हम देखते हैं कि भारतवर्ष के अन्दर हर जगह धर्म का दृष्टिकोण है। इस सम्पूर्ण विश्व के अन्दर एकता को मान करके हम अपने सारे जीवन की रचना करना चाहता हैं। व्यक्ति का लक्ष्य, समाज का लक्ष्य, ये सब उस अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हैं। हमने अपने यहाँ पर एक सामंजस्य का विचार विशेष रूप से प्रमुखता के साथ में रखा, और उसी के आधार पर हमारे यहाँ पर सारी की सारी चीजें गठित हुईं। ये सारी चीजें हमारे राष्ट्र के विशेष स्वरूप को प्रकट करती है, विशेष अस्मिता को प्रकट करती है, विशेष स्वभाव को प्रकट करती है।

विघटन समाप्त करने के लिये राष्ट्रभक्ति का जागरण आवश्यक

अब प्रश्न जो आज दिखाई देता है कि हमारा एक विशेष स्वभाव है, इसके होते हुए भी आज हमारे राष्ट्र में विघटनकारी चीजें क्यों दिखाई दे रही हैं ? कोई कहता है कि हम अपना खालिस्तान बनायेंगे, कोई कहता है कि हम अपना असम अलग करेंगे इसका कारण क्या है ? उसका कारण है कि केवल अनुभूति में कमी हो गयी है। इस

राष्ट्र की एकता की अनुभूति कराने के जो प्रयत्न हैं उनमें किसी प्रकार की कमी है। क्योंकि परिवार का अनुभव प्रत्यक्ष व्यक्ति करता है, इसी प्रकार से जिसको हम कबीला कहते हैं, उसका भी अनुभव प्रत्यक्ष व्यक्ति करता है, उसको देखता है क्योंकि वह रोज के अनुभव की चीज है। लेकिन इस सम्पूर्ण राष्ट्र का हमारे जीवन के अन्दर क्या स्थान है, इसकी अनुभूति, करानी पड़ती है और इसलिए जिसको हम राष्ट्रभक्ति कहते हैं, राष्ट्रीयता कहते हैं, यह राष्ट्रीयता एक प्रयत्न-साध्य विषय है।

सम्पूर्ण भारत एक—इस भाव को जगाने के हमारे प्रयास

सम्पूर्ण भारतवर्ष एक है इस धारणा को अंकित करने के लिए, हमारे महान पूर्वजों ने कितने प्रयत्न किये। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक एक देश है। उधर कैलाश के ऊपर शंकर जी को बैठाल दिया और उनको प्राप्त करने के लिए तपस्या करने वाली कन्याकुमारी जो है उसको दक्षिण छोर में बैठाल दिया, और यह अपना एक देश है। सारे भारत के अन्दर सती के शव को बिखरा दिया और जहाँ-जहाँ सती का शव पड़ा वहाँ-वहाँ एक जागृत शक्ति का पीठ तैयार हो गया। फिर आसाम के अन्दर चले जाइये तो वहाँ कामाख्या मिलती है, तो इधर बलूचिस्तान के अन्दर चले जाइये तो हिंगलाज माता मिलती है, हिमांचल के अन्दर चले जाइये तो वहाँ पर ज्वालामुखी मिल जाती है, जहाँ पर उनकी जिह्वा गिरी है। दक्षिण को चले जाइये तो वहाँ पर मीनाक्षी मिलती है जहाँ आँखें गिरी हैं। इस प्रकार से हिंदुस्तान भर के अन्दर इन सारी चीजों को बिखेर करके कहा कि यह देश एक है। सिख हैं, जैन हैं, सारे देश भर के अन्दर इसकी एकता को स्वीकार करके उनके सारे तीर्थ स्थानों को देखेंगे। इस प्रकार जो एकता की अनुभूति हमारे पूर्वजों ने कराई उसके लिए कितने सारे प्रयत्न किये। मेले हैं, तीर्थ यात्रायें हैं, जिन दिनों आवागमन के साधन नहीं थे उन दिनों कहा तीर्थ यात्रा करो, चारो धामों की यात्रा करो। उन चारों धामों की यात्रा करने से सम्पूर्ण देश की एकता की अनुभूति होती थी। इस

भूमि के प्रति एक आस्था जगाई कि यह भूमि हमारी कर्म भूमि है, दुनिया के किसी देश ने अपनी भूमि को कर्म भूमि नहीं कहा। किसी ने Fatherland कहा, Motherland कहा, Holyland कहा। हमने हिंदु भूमि, पित्र भूमि, मातृ भूमि तो कहा ही लेकिन Actionland कर्म भूमि भी कहा। यह केवल हमने कहा, 'यतो अहं कर्म भूम्या.....।'

दुनिया के अन्दर, बाकी सब भोग भूमि है केवल यह कर्म भूमि है। ईश्वर की प्राप्ति के लिए जिस प्रकार के कर्म करना आवश्यक है वे इसी भूमि पर हो सकते हैं। इसलिए ईश्वर की आत्मा को इस धरती पर जन्म लेना ही पड़ेगा। अन्तिम पड़ाव इसी भूमि के अन्दर होगा। आखिरी station हिन्दुस्थान है इसके बाद ही भगवान तक जा सकते हैं, यहाँ आना हीं पड़ेगा। तो हमारे यहाँ पर यह भावना उत्पन्न की गई, इस भूमि के प्रति जगायी गयी, आस्था जगायी गयी, इसकी एकता के प्रति भावना जगायी गयी। इतना ही नहीं तो इस एकता को बनाये रखने के लिए कितने ही प्रयत्न किये गये।

विविधता में एकात्मता—हमारे राष्ट्र जीवन का सिद्धान्त

हमारे यहाँ पर इस एकता को बनाये रखने का एक भिन्न प्रकार का प्रयत्न हुआ, पश्चिम के अन्दर एक भिन्न प्रकार से प्रयत्न हुआ। इस्लाम में ईसाइयत में या कम्युनिज्म में सारी दुनिया के अन्दर भ्रातृत्व की बात तो कही, लेकिन भ्रातृत्व कैसे पैदा करेंगे ? उन्होंने कहा कि हम Uniformity एकरूपता निर्माण करेंगे। दुनिया के सबलोग एक ही पुस्तक को मान लें, एक ही ईश्वर को मान ले, एक ही प्रकार की पूजा पद्धति स्वीकार कर लें, तो दुनिया के अन्दर एकत्व स्थापित हो जायेगा। दुनिया के अन्दर उन्होंने तलवार ले करके सबको एक ही रूप में ढालने का प्रयत्न किया। इसलिये दुनिया में संघर्ष पैदा हुए, तथा वे एकता स्थापित नहीं कर सके। अपने ही लोगों के बीच में नहीं स्थापित कर सके। लेकिन हिंदुस्थान के अन्दर लोगों ने कहा, हमारे महापुरुषों ने कहा कि विभिन्नता है, इसी में

तो सौंदर्य है इसी में तो आनन्द है। अगर यहाँ बैठे हुए सभी लोगों का एक ही जैसा चेहरा होता तो क्या हमको आनन्द आता ? अच्छा लगता ? कौन राम है कौन श्याम है ? कौन मोहन है ? कौन शान्ताराम है ? हम पहचान सकते ? आज भिन्न-भिन्न प्रकार के चेहरे यहाँ पर बैठे हुए हैं, कोई मोटा है, कोई दुबला है कोई ऊँचा है कोई नीचा है कोई ठिगना है। अब इसको देखकर हम कितना आनन्दित होते हैं। देखो लम्बे जा रहा है, उसने कहा देखो ठिग्गू जा रहा है, इस तरह मजाक होता है आनन्द आता है। तो ये दुनिया का सौंदर्य है इसलिए हमारे यहाँ कहा कि विविधता में सौंदर्य है इस विविधता को कायम रखना चाहिए। अगर दुनिया की सुन्दरता हमें बनाए रखना है तो इसे कायम रखो। जरा वैचारिक दृष्टि से देखोगे तो इस विविधता के पीछे एक एकात्मता निहित है। ये केवल ऊपरी दिखावा है यह Personality है, हम सबने मुखौटे चढ़ाये हुए हैं अन्दर से हम सब एक हैं। सोने का आभूषण भिन्न-भिन्न प्रकार का दिखता होगा कहीं कानों की बाली है, कहीं नाक की नथनी है, तो गले का हार है तो करधनी है, कंगन है अलग-अलग दिखते हैं, सोना एक है। बाजार में बेचने के लिए जाओगे जितना सोना होगा उतना बिकेगा। सोना कितना इससे मतलब है। तो इसी प्रकार से हम सब लोगों के बीच में एक आत्मा है। हमारे यहाँ सब लोगों ने माना है कि अन्दर से हम सब एक हैं और इसलिए विविधता में एकात्मता यह हमारे राष्ट्र जीवन का सिद्धांत बना और इसको हमने हर क्षेत्र में लागू किया।

रूप अनेक—ईश्वर एक, पन्थ अनेक—गन्तव्य एक

भगवान कैसा है ? भगवान तो निराकार, निर्विकार, निरंहकार हैं लेकिन आदमी उसको वैसा देख नहीं सकता। जिसकी जैसी प्रकृति होगी वैसा देखेगा। जो आदमी, पहलवान है उसका भगवान भी पहलवान होगा, वह दुबला-पतला नहीं हो सकता है। और इसलिए उसको हनुमान जी चाहिए, शत्रु को उठाकर पटक दिया उसे आनन्द आया। लेकिन जो दयालु

केशव माधव पुस्तकालय
सोमनाथ मन्दिर के पास, पाले

होगा उसको हनुमान जी नहीं चाहिये उनके लिए तो दूसरे भगवान चाहिये जो स्वयं बहुत दयालु हों । जो आदमी क्रोधी है उसको कौन सा भगवान लगेगा, उसको, शंकर जी ने तीसरा नेत्र खोल दिया और सबको भस्म कर दिया—ऐसा भगवान अच्छा लगेगा इसलिये कहा गया हर आदमी की अपनी प्रकृति के अनुसार उसका अलग-अलग भगवान होगा ।

'जाकी रही भावना जैसी । प्रभु मूरत देखी तिन तैसी ।'

हमारे यहाँ कहा कि इसकी चिन्ता मत करो भगवान कैसा है । जब उसके साथ एकरूप होंगे तभी पता लगेगा । हमको जैसे लगे हम वैसा माने । हमने सबको कहा कि तुमको ऐसा दिखता है तुम्हारा भगवान ठीक है । हमको ऐसा दिखता है, ये भी ठीक है । इसलिए हमने रूप अनेक माने लेकिन ईश्वर एक माना । उस तक पहुंचेंगे कैसे ? कई रास्ते हैं । यहाँ से बेंगलूर जाना है तो एक ही रास्ता है क्या ? चार रास्तों से घूम घूमा कर जा सकते हैं । ईश्वर तक पहुंचने के सब रास्ते सच है । हमने यह नहीं कहा कि हमारा रास्ता सच बाकी सब गलत—यही पहुंच सकता है, बाकी पहुंचेगा ही नहीं । अनेक रास्ते हैं किसी से भी जाओ । इसलिए 'पंथ अनेक गंतव्य एक' हमने अपने राष्ट्र जीवन का सिद्धांत माना । हम देखे कि हमारे यहाँ तो भाषायें अलग-अलग मानी, लेकिन कहा कि इसमें भाव एक कर दो तो, एकता स्थापित कर देंगे । इसलिये भाषा को नष्ट नहीं किया । भाषायें अनेक रखी लेकिन इसमें एक भाव व्यक्त किया । समाज रचना भी हमने अनेक मानी, एक स्त्री के एक पति होना चाहिये कि एक स्त्री के अनेक पति होने चाहिए एक पुरुष के एक पत्नी होना चाहिये या अनेक, हमने सब माना । समाज जीवन की धारणा के लिए सब प्रकार की चीजें आवश्यक हो सकती हैं । लद्दाख के अन्दर जहाँ जमीन बहुत कम है और आवागमन के साधन पुराने समय में जहाँ नहीं थे वहाँ पर यदि प्रत्येक भाई अलग-अलग शादी करता है तो फिर उसकी जमीन बांटनी पड़ेगी । जमीन पहले से ही थोड़ी है तो बटेगी कैसे । इसलिए नियम बनाया कि बड़ा भाई शादी करेगा और उसकी पत्नी सब भाइयों की पत्नी होगी ।

मान लिया। लेकिन हम महाराष्ट्र में चले जायें तो वहाँ कोली और बुनकर हैं, वे कई पत्नियाँ रखते हैं क्योंकि कपड़े बुनने का काम करना है और कपड़े बुनने के काम में कई चीजें लगती हैं। सूत को रंगना पड़ता है, उसको फैलाना पड़ता है, उसको ताना है, भरनी है, सारी चीज तैयार करनी पड़ती हैं। अलग से मजदूर किये जायेंगे तो पैसा बहुत खर्च करना पड़ेगा, शादी होगी पत्नी होगी भोजन बनायेगी और भी काम करेगी। इस प्रकार से, सामाजिक धारणा के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की परिस्थितियों में जो आवश्यक था वैसी अनेक प्रकार की समाज रचना हमने स्वीकार की होगी। समाज की धारणा के लिए हमने व्यवस्थायें तो अनेक स्वीकार कीं लेकिन लक्ष्य एक रहा 'समाज की धारणा।'

भारत एक अभिनव प्रयोग भूमि

विविधता में एकात्मता का सिद्धांत यह हमारे राष्ट्रीय जीवन का, हमारे जीवन दर्शन का एक सिद्धांत सिद्ध हुआ। उसको हमने समाज जीवन के हर क्षेत्र में लागू करके प्रत्येक व्यक्ति का विकास हो, प्रत्येक संस्था का विकास हो, प्रत्येक चीज का विकास हो—इस प्रकार से अभिनव व्यवस्था हमने अपने देश में बनाकर रखी और इसकी प्रयोग भूमि हमने भारतवर्ष को बनाया जिसके अन्दर इतनी विभिन्नता है जहाँ एक ओर ठंडे से ठंडा स्थान है वहाँ गरम से गरम स्थान भी है। एक ओर तो जहाँ बिलकुल वर्षा नहीं होती ऐसा जैसलमेर है तो जहाँ दुनिया की सबसे अधिक वर्षा होती है ऐसा मेघालय भी है। जितनी ऋतुयें हिन्दुस्थान में होती हैं, दुनिया में कहीं नहीं होती। ६ ऋतुएं केवल हिन्दुस्थान में ही होती हैं। कहीं तो एक ही ऋतु होती है कहीं दो ऋतुयें होती हैं हमारे यहाँ ६ होती हैं। इसलिए हमारे यहाँ जितनी विविधता है उतनी दुनिया में कहीं नहीं। कहते हैं दुनिया में जितने प्रकार के पशु-पक्षी पेड़-पौधे हैं उनमें से आधे हिन्दुस्थान के अन्दर हैं। हमारे महापुरुषों ने सोचा कि इस विविधता के अन्दर एकात्मता स्थापित कर सके और अपने सिद्धांतों के आधार पर यहाँ राष्ट्र जीवन खड़ा कर सकें तो सारी दुनिया के आगे एक आदर्श खड़ा

कर सकेंगे—इस आधार पर उन्होंने हमारे राष्ट्र जीवन का विकास किया। उस एकता की अनुभूति जब कम पड़ जाती है तब आदमी एक दूसरे से लड़ने लगता है। हम जब 'यह व्यक्ति हमारा है' ऐसा भूलते हैं, पराया आदमी सोचते हैं तब हम उससे लड़ने लगते हैं, लेकिन जब तक मन में यह भाव रहता है कि 'यह हमारा है' तब तक जो है हमारी उससे लड़ाई नहीं होगी। इसलिए यह जो एकता की अनुभूति हमारे महापुरुषों ने कराई, यह एकात्मता हमारी है इस एकात्मता की अनुभूति मन्द पड़ जाने के कारण आज हमको राष्ट्र जीवन में विघटन का यह दृश्य दिखाई दे रहा है। हमारी जो विविधता थी उसी को आज विभेद मान लिया गया है। उस विभेद को बढ़ा करके विदेशी शक्तियाँ भी इस देश को तोड़ने का प्रयत्न कर रही हैं।

इसलिए हम जो हिन्दु राष्ट्र की बात करते हैं इस कारण कि एक अभिनव सिद्धांत के आधार पर हमने हिन्दु राष्ट्र जीवन का विकास किया और आज से विकास नहीं किया तो हजारों वर्ष पहले से विकास किया जब तक यूरोप के राष्ट्र पैदा ही नहीं हुए थे। यूरोप की राष्ट्रीयता तो केवल चार सौ साल पुरानी है। आज यह जो हमको राष्ट्र दिखाई दे रहे हैं इनका इतिहास चार सौ साल पुराना है। अफरीका के अन्दर तो अभी राष्ट्र पैदा हो रहे हैं अभी कबीला-निष्ठाओं से राष्ट्र निष्ठाओं तक पहुंचने में समय लगेगा। लेकिन हम इस यात्रा को कब का पूरा कर चुके और वैदिक काल के अन्दर हमने परिपूर्ण राष्ट्र जीवन का अनुभव किया जब हमने कहा—

भद्रमिच्छन्ति ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं-बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसंनमन्तु॥
यजुर्वेद—१९, ४१, १

राष्ट्र देवता की उपासना करो तो यह बात हमने तब से कही। इस प्रकार अत्यन्त प्राचीन काल से एक अभिनव सिद्धांत के आधार पर हमने अपना राष्ट्र जीवन खड़ा किया है। इस राष्ट्र जीवन की जो अभिनवता, इस राष्ट्र जीवन की जो विशेषता है अन्यान्य देशों के राष्ट्रों से जो हमारी श्रेष्ठता है, हमारी राष्ट्रीयता की जो श्रेष्ठता है, यही राष्ट्रीयता का विचार सम्पूर्ण विश्व को भी एकता के सूत्र में गूँथने के लिए किस प्रकार से कारणीभूत हो सकता है इस बात को हम जितनी अच्छी तरह से अनुभव करेंगे, समझेंगे उतनी ही अधिक अच्छी तरह से हम संघ के कार्य को भी कर सकेंगे, हिन्दु राष्ट्र का विचार हम उतना ही अधिक लोकप्रिय बना सकेंगे, हम अपनी आस्था को उतना ही दृढ़ कर सकेंगे।

हिन्दू समाज पर आक्रमण

—मा० रज्जू भैया—सरकार्यवाह

हमारे बौद्धिकों में अधिकांश चिन्तन अपने दोषों के विषय में और उन दोषों को दूर करने के प्रयत्न के बिषय में होता है। इसी के साथ-साथ ये भी आवश्यक है कि जहाँ हम सभी को बलवान करके, सभी दोषों से मुक्त हों इस प्रयत्न में लगे हैं वहाँ इस शरीर को तोड़ने वाले तत्व कौन से हैं, चारों तरफ से बीमारियाँ कौन-सी चल रही है, जिनसे इस शरीर को रोग ग्रसित हो जाने की सम्भावनायें हैं—इसके लिये अच्छे कुशल डाक्टरों के नाते उसकी जानकारी भी रखें।

हिन्दू समाज पर तीन आक्रमण

हम सब जानते हैं कि अपने इस समाज पर आज मुख्यतः तीन—आक्रमण हैं। पहला जिससे हम सभी अधिक मात्रा में परिचित हैं वो इस्लाम का आक्रमण है, क्योंकि हजार वर्ष से यह देश इस आक्रमण से ग्रसित रहा है इसलिये हमलोग इसके विषय में उनके काम-धाम के तरीके से काफी मात्रा में परिचित हैं। आज यह स्मरण करना आवश्यक है क्योंकि पिछले दो सौ वर्ष में ऐसा लगता था कि वह आक्रमण अब समाप्त है—अंग्रेज यहां आ गया है और कुछ लोगों के मन में भ्रान्ति भी बन गई थी कि अब उनके साथ सौमनस्य का काल आया है—वैमनस्य नहीं रहा है ।

इस्लाम का ढंग

हम सब जानते हैं कि उनका तौर-तरीका कौन-सा है ? जहाँ सम्भव

हुआ वहाँ उन्होंने आक्रमण किया; आक्रमण करके उस देश को जीता और उस देश में जीतने के बाद सब प्रकार के प्रयत्न से उस देश की संस्कृति, उस देश की सभ्यता पूर्णतः नष्ट कैसे हो, यह प्रयत्न उनका रहा है। उनके सिद्धान्त की कथा तो आपने सुनी होगी। बड़ी भारी एंलेगझेड्रियरा की यूनिवर्सिटी थी उसके अन्दर उस समय के बड़े प्रसिद्ध ग्रन्थ थे तो उन ग्रन्थों को आग लगाते समय कैसा तर्क, कैसा सिद्धान्त प्रस्तुत किया गया कि इसमें से जो ग्रन्थ कुरानशरीफ के ख़िलाफ है उनको तो रहने का कोई अधिकार नहीं क्योंकि वे तो हमारे धर्म, हमारे सिद्धान्त की पुस्तक के खिलाफ है, ऐसे सब ग्रन्थों को जला दिया जाये और कहा कि जो कुरानशरीफ के अनुकूल है, तो जब कुरानशरीफ मौजूद ही है तो उनकी आवश्यकता क्या है? इसलिए उनको भी जला दिया जाये और इसलिये इस विश्व विद्यालय के समस्त ग्रन्थों को जलाने का काम उन्होंने किया। यही भारतवर्ष में हुआ। जहाँ-जहाँ वे गये उन्होंने यही किया और आज कुछ युग बदला है, विश्व बदला है–सभ्य भाषा में कुछ बातों को रखने की आवश्यकता पड़ी है तो ऐसी सभ्यता उनके अन्दर नहीं आई है। अभी मक्का के लिये जाने वाले, हज यात्रियों के लिये खुमैनी साहब, जो इस समय इरान के सर्वेसर्वा हैं, उनका सन्देश था कि जो अपने विरोध में है हम उन्हें पहले तर्क से समझाये फिर कुरान से समझाये और फिर तलवार से समझायें। और कहा कि यही हमारे हजरत साहब ने किया है, इसमें कोई आपत्ति नहीं। हमने यह देखा कि जिन-जिन देशों में वे गये उन्होंने कोई भी तरीका बचाकर नहीं रखा—बच्चों को, बूढ़ों को, स्त्रियों को सभी को तलवार के घाट उतारने में किंचित भी संकोच नहीं किया।

उनके तीन प्रमुख तरीके

उनके तरीके तीन हैं—प्रथम तरीका है कि प्रत्येक देश के अन्दर अगर वह किसी कारण से आज शासन में नहीं है, उसको उन्होंने कहा—दारुल-अमन। दूसरे ऐसे देश जहां पर वे शासन में हैं उसे वे कहते हैं, दारुल

इस्लाम । वहाँ तो उनका शासन हो गया । अब तो जो बचे खुचे थोड़े बहुत लोग हैं, अन्य प्रकार के हैं, उनको समाप्त करने का ही उनका काम रह गया । तीसरा जहाँ संघर्ष चल रहा है उनकी स्थिति अच्छी है, बलवान स्थिति है, दूसरों की सत्ता को समाप्त करना चाहते हैं, अपनी स्थापित करना चाहते हैं, उसे दारुलहरब, संघर्ष का देश कहते हैं । भारत तो दारुलअमन है, यहां पर शान्ति है, उनके धर्म का भी आदर है इसलिये अमन चैन से यहां रहते हैं । परन्तु अमन चैन रहने का अर्थ यह रहता है कि धीरे-धीरे अपनी शक्ति बढ़ाये चलो और फिर, पहले दारुलहरब, संघर्ष की भूमि, बनाया जाये और फिर दारुलइस्लाम में उसे परिणित किया जाए। हम सब जानते हैं कि जब पाकिस्तान बना तो उनके द्वारा जो सारे देश भर में बहुत प्रकार के उपद्रव हुए, संहार हुए, उसके कारण से समस्त भारतवर्ष में बड़ी भारी प्रतिक्रिया उनके विरोध में थी और इसलिये उनको लगा कि पाकिस्तान बनने के बाद उनके प्रति सारे समाज में एक बड़ा ही प्रतिशोध का भाव है इसलिए चुपचाप शान्ति से रहने की आवश्यकता है। उन्होंने उस समय कहा कि भाई वह तो मुसलिमलीग का कहना था, हम जानते नहीं थे उसने हमको बरगला दिया, हम तो आखिर हिन्दू हैं, हमारे पूर्वज हिन्दू थे । हम तो यहीं के रहने वाले हैं । हम तो कहीं जायेंगे नहीं। यहीं मरेंगे यहीं जियेंगे, आपके साथ ही हम रहेंगे । मुसलिम लीग हमने खतम कर दी है। इधर हमारे देश के नेता और भोला हिन्दू समाज, यह दोनों उसकी बात में आ गये और वे १५-२० वर्ष युक्ति से अपने संगठन करने का काम करते रहे अब तो दारुलअमन है हम यहाँ कुछ करने वाले नहीं हैं, ऐसा उन्होंने कहा ।

जनसंख्या की असाधारण वृद्धि

पर हमको मालूम है कि पिछले दो चार वर्षों में कैसी उनकी सब प्रकार की गतिविधियां चल पड़ी हैं । उनका पहला प्रयास है अपनी जन-संख्या बढ़ाने का प्रयत्न । देश में हिन्दू की जनसंख्या का जो प्रतिशत बढ़ रहा है उससे कहीं अधिक मात्रा में प्रतिशत मुसलमानों की जनसंख्या का

बढ़ रहा है। सन्तति निरोध योजना का अपने धर्म की आड़ में कहीं भी प्रयोग नहीं होने देंगे। कहेंगे, नहीं, आप हमारे धर्म में परिवर्तन नहीं कर सकते। देश के समस्त समझदार लोग कहते हैं कि देश को एकरूप बनाने के लिये—एक सूत्र में बांधने के लिये कामन सिविल कोड भी होना चाहिए। परन्तु उसका भी बड़ा भारी विरोध किया। हमें चार विवाह करने का अधिकार है, हमारा कानून आप संशोधित नहीं कर सकते। इस सबके पीछे हेतु एक ही बात का, कि जनसंख्या कैसे बढ़े ?

बाहर के मुसलमानों को बुलाकर यहां बसाने के प्रयास

दूसरा भी उनका ढंग हम जानते हैं कि—बंगला देश से या अकूपाइड काशमीर से मुसलमानों को बुलाना, यहां पर उनको रखना, सब प्रकार की सुविधा देना। आखिर असम में जितने लोग आये हैं और आज बंगाल में जितने आ रहे हैं, इन सबको कौन सुविधा दे रहा है ? रहने की कौन जगहें दिला रहा है ? कौन उनको वहां टिका रहा है ? कौन उनकी सुरक्षा करता है ? यहाँ का रहने वाला मुसलमान ही करता है। यहां का रहने वाला मुसलमान अगर उसके लिये तैयार न हो तो वे जल्दी पकड़ में आ जायें और बाहर भेज दिये जाएँ।

धर्मान्तरण से

और तीसरा इस देश में धर्मान्तरण करना। अभी तक धीरे-धीरे चुपके-चुपके करते थे, अबकैसा साहस बढ़ा है, कि तमिलनाडु की घटना पूरे देश की आंख खोलने लायक है। इसका यह मतलब नहीं कि चुपचाप धीरे-धीरे सभी लोग इस प्रकार के धर्मान्तरण के प्रयत्न में नहीं रहते थे। हर एक मुसलमान समझता था कि किसी न किसी को मुसलमान बनाना यह बड़ा धर्म का कार्य है। कैसी विचित्र कल्पना है, हमारी दृष्टि से शायद वह कितनी विचित्र लगेगी। गाजियाबाद में एक ४५, ५० वर्ष की, अच्छी धनवान महिला ने, २५ वर्ष के हरिजन युवक से शादी की। दोनों की शादी

पहले हो चुकी थी, उसके भी बाल बच्चे थे परन्तु शादी में यह तय हुआ कि तुम मुसलमान बन जाओगे। उसको कहा गया कि ऐसी महिला से शादी होने से तुम्हें धन सम्पत्ति मिलेगी। सबको बड़ा आश्चर्य लगा कि इसके बाल बच्चे हैं उसके बाल बच्चे हैं। उस महिला को उसके बच्चों ने भी समझाया कि यह तुम क्या कर रही हो, तुम्हारी आधी उमर का लड़का है तो उसने कहा कि उसको मुसलमान बना रही हूं। यह वास्तव में काम है। ऐसा धर्मान्तरण का काम जब उनको लगता है कि हिन्दू समाज जाग्रत नहीं है, सोया हुआ है तब तो खुलकर करते हैं और जब उन्हें लगता है कि समाज जाग्रत हो गया है तब छिप छिपकर करते हैं। दूसरे प्रान्तों में ले जाकर करते हैं। परन्तु यह जनसंख्या बड़ी तेजी से बढ़ाने का काम उनका चला है उनको लगता है कि जनसंख्या के बलबूते पर फिर हम राजनीति के अन्दर अपना असर डाल सकते हैं।

राजनीतिक दबाव

राजनीतिक सूझबूझ बहुत है। हमारा तो एक व्यक्ति अगर एक पार्टी में है तो उसे दूसरी पार्टी में जाने में संकोच हो सकता है कि कैसे जायें ? अपने स्वार्थ के लिये जाएं तो बात दूसरी है, सिद्धान्त के अनुसार तो नहीं जा सकता। किन्तु उनका तो एक ही सिद्धान्त है कि मुसलमान का हित कैसे होगा ? उन्होंने राजनीतिक दांव-पेंच का लाभ इसी दृष्टि से उठाया है, सौदाबाजी की है, हमारे पास इतने वोट हैं हम इतना वोट दे सकते हैं। हमारी यह यह बातें आपको माननी पड़ेंगी। ऐसी अनेक मांगें धीरे-धीरे बढ़ाना और राजनैतिक पार्टियों से अपने वोट बैंक के आधार पर सौदे-बाजी करना। उनके नेता रात-रात में अपने पूरे समाज को बदल सकते हैं ऐसा उनका आज विश्वास है और अपने समाज के साथ सम्बन्ध है। इसलिए राजनीतिक पार्टियों को उनसे डर रहता है। जिन दलों को ये वोट देने वाले भी नहीं हैं, वो भी उनके विषय में कहने में संकोच करते हैं। और लगता है कि हर राजनैतिक पार्टी में वह आदमी घुसाकर रखते हैं।

दो चार उनके व्यक्ति हर एक राजनैतिक पार्टी में हैं। समय पर अगर कोई कड़ा निर्णय लेना हो तो वे बैठे हुये लोग उस निर्णय को बदल सकते हैं—उसे हल्का कर सकते हैं।

मुझे स्मरण है कि हमारे प्रयाग विश्व विद्यालय में एक विद्यार्थी थे—बहुत अच्छे, योग्य। विद्यार्थी थे, नेता भी थे। यूनियन के अध्यक्ष भी थे। अनसारी उनका नाम था। एक बार उनका परिचय मुझे एक प्रोफेसर ने कराया और कहा कि यह आसिफ अनसारी हैं, यह कम्यूनिस्ट पार्टी में हैं, इनके भाई सोशलिस्ट पार्टी में हैं, इनके तीसरे भाई कांग्रेस में है, क्या बतायें संघ वालों ने गुंजाइश नहीं रखी, नहीं तो एक भाई संघ में भी रहता। क्यों? तो जिससे कोई भी पार्टी आए, हमारी सुविधा हर एक से बनी रहे। तो हर एक पार्टी में अपना स्थान बनाकर रखना और राजनैतिक दबाव पैदा करना—यह उनका राजनैतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य है।

दंगे व आतंक से

मुस्लिम समाज को अपने निकट और नेतृत्व के नीचे लाने के लिये, आक्रमण हो सकता है ऐसा भय की मनोवृत्ति वे उत्पन्न करते हैं। उसके लिए सारे देश में दंगे, केवल हिंदू समाज के साथ नहीं तो पुलिस के साथ भी मुठभेड़ करने का उनका साहस बढ़ाते हैं। इसलिए मुसलमान अन्य सामग्री इकठ्ठा नहीं करता—कोई धनवान हो गया तो वह कोई टेलीविजन सेट, कोई स्टीरिओ टेपरिकार्डर नहीं खरीदेगा, वह बन्दूक खरीदेगा, वह एयरगन खरीदेगा, पिस्तौल, रिवाल्वर खरीदेगा, ऐसी मनोवृति है। जैसा कि थोड़े दिन पहले आपने सुना होगा कि मुरादाबाद में इतने शस्त्र हैं कि जितने शायद लन्दन शहर के अन्दर भी शस्त्र नहीं। इस तरह मुसलमान के अन्दर लड़ने की मनोवृति जग सकती है क्या ? यह उनका विचार है। फिर ऐसा देखा जाता है कि उनकी दरगाहें रेलवे परिसर में, सड़क के बीच अथवा पुल के नीचे रहती हैं जहाँ से, लोगों का मत है, कि खुफियागीरी होती है और ऐसे महत्व के स्थानों पर इनका होना, वे कभी भी संकट का कारण

बन सकते हैं। मस्जिदों के सामने से दिन भर ट्रैफिक जाता रहता है, पों-पों होती है, राजनैतिक जलूस निकलते हैं सभी प्रकार की नारेबाजी होती है परन्तु इसमें उनको कोई आपत्ति नहीं किन्तु हिन्दुओं का धार्मिक जलूस जाता है तो उनको स्वीकार नहीं क्योंकि दूसरे धर्म को अपमानित करना और अपना बड़प्पन दिखाना रहता है।

पेट्रोडालर की सहायता

आज अरब देशों का पैसा बहुत आने लगा है। अरब देश पिछले दस वर्ष में तेल के कारण बहुत अमीर हो गये हैं और उन लोगों की बुद्धि में यह बात आती है कि इस्लाम धर्म फैलाने के लिए हमारे इस पैसे का उपयोग होना चाहिए। हमारे देश में मदरसा खोलने के नाम पर, हमारे देश में मस्जिद की मरम्मत के नाम पर, अस्पताल खोलने के नाम पर लाखों रुपया जो आ रहा है तो सारा रुपया मुसलमान की सहायता करने के लिए, गरीब मुसलमान की मदद करने के लिए प्रयोग में नहीं आता हैं। हिन्दू को मुसलमान बनाने के काम आता है। यही इसके पीछे लक्ष्य है नहीं तो दिन रात यह चिल्लाना हमारा मुसलमान बहुत गरीब है और उसकी मदद के लिये कुछ न करना और उधर मस्जिदों के लिये लाखों रुपये की सम्पत्ति खरीदना, ये तो कुछ दोनों बातें मेल नहीं खातीं। शिक्षा के लिये भी पैसा काम नहीं आता। आपको आश्चर्य होगा कि केरल में सबसे अधिक शिक्षा का प्रतिशत है, हिन्दू समाज में है, ईसाइयों में है, परन्तु मुसलमान में नहीं? मुसलमान समझते हैं अगर वो पढ़ जायेगा, होशियार हो जायेगा तो हमारी बात कम मानेगा। आज वहाँ का मुसलमान गरीब नहीं है। बहुत लोग खाड़ी के देशों में जाने के कारण पैसा वाले हैं। धन बहुत आता है परन्तु पढ़ाई लिखाई के मामले में, शिक्षा-दिक्षा में, विकास में, उदार मनोवृति बनाने में, कहीं काम में नहीं आता है। आज हमारे देश के अन्दर उनका आक्रमण कितना उग्र होकर खड़ा हुआ है। पिछले वर्ष कैसे दंगे हुये, सारे देश में हमारे देश के राजनैतिक नेता, हमारे देश के हिन्दू नेता, उनके अन्दर

एक घबराहट पैदा हो गयी थी जैसा कि पाकिस्तान बनने के पहले, जब उन्होंने चारों ओर उपद्रव देखे, मारपीट देखी, घबड़ा गये और पाकिस्तान दे दिया। आज उसी प्रकार से हिन्दू समाज के अन्दर, हिन्दू नेताओं के अन्दर घबराहट पैदा करने के लिए दंगे हुए। आप यह देखेंगे कि जहाँ-जहाँ हिन्दू बहुमत में है वहाँ दंगा नहीं होता, जमशेदपुर के अन्दर भी, जो ८० बस्तियाँ हैं, जहाँ ६० बस्तियाँ हिन्दू बहुमत की हैं वहाँ दंगा नहीं हुआ, दंगा उन्हीं बस्तियों में हुआ जहाँ मुसलमान ज्यादा थे और दंगे का स्वरूप क्या था ? रामनवमी के जलूस के ऊपर बम फेंके गये, रामनवमी जलूस के ऊपर क्रेकर्स फेंके गये। कहाँ आज जो पिछले १५, २० वर्ष तक थोड़ा छिपकर, थोड़ा अन्दरूनी काम उनका चला था, आज खुलकर सामने आया है, यह खुला आक्रमण हमारे देश पर है। यह ठीक है कि हमारे देश की बलिदानी परम्परा आदि के कारण से, हमारे पूर्वजों के त्याग और बलिदान के कारण से, जहाँ अन्य देश इरान है, अफगानिस्तान है, वे शत प्रतिशत न सही तो कम से कम ९५ प्रतिशत मुसलमान बन गये, हमारे देश में ७ सौ साल शासन व संघर्ष करने के बाद भी चौथाई से ज्यादा जनसंख्या उनकी न बन सकी। परन्तु दोनों काम चालू है। एक क्षेत्र को उन्होंने अफगानिस्तान के रूप में अपने अधिकार में कर लिया है, वहाँ से वे सब प्रकार के आक्रमण की योजना बना सकते हैं—तीन-चार बार बनाई है, और शेष भारत में उनकी सब प्रकार की आक्रामक गतिविधियाँ चल रही हैं। मैं समझता हूं कि हममें से कोई भी इस बात से अपरिचित नहीं होगा।

ईसाई आक्रमण-सेवा का मुखौटा

दूसरा आक्रमण हमारे देश में इसी प्रकार का ईसाइयों का है, यह वैसे तो बहुत पहले आये। केरल के अन्दर तो कहते हैं १७ सौ १८ सौ वर्ष पूर्व आये लेकिन वो दूसरे दृष्टि से आये थे। वे उस समय वहाँ पर शरणार्थी बनकर आये थे इसलिए उनका तो वैसा कार्य नहीं रहा। पर अंग्रेज सरकार, फ्रेंच सरकार, गोवन सरकार, पोर्तगीज सरकार, इस प्रकार की

सरकारों के साथ ये पादरी भी आये। जे० सी० कुमारप्पा जो गांधी जी के साथी थे, स्वयं ईसाई थे उन्होंने एक पुस्तक लिखी है। उसमें साफ कहा है कि ईसाई मिश्नरी अंग्रेजी शासन का चौथा हाथ है। कैसा चौथा हाथ? एक सेना होती है, एक जल सेना होती है, एक वायु सेना होती है। ऐसी तीन सेनाएं होती हैं और चौथी सेना ईसाई मिश्नरी हैं। मिशनरियों ने ऊपर से तो जामा पहना है—सेवा का, शिक्षा देने का, चिकित्सालय चलाने का, पिछड़े हुए क्षेत्र में जाकर लोगों की उन्नति करने का। वो कहते हैं कि 'ईसू' बड़ा दयालू था वो बड़ा प्रेम से भरा हुआ था। प्रेम हमारे सारे विचार का आधार है और उस प्रेम के आधार पर ही हम इस जगत के दुख दैन्य को देखकर द्रवित होकर सेवा करने के लिए पहुंचे हैं। परन्तु यह मुखौटा है, यह ऊपर से केवल एक दिखावा है अन्यथा इस सेवा के कार्य में उनकी कोई रुचि नहीं है, अगर उसके द्वारा धर्मान्तिरण नहीं होता है। एक विशेष कार्यक्रम हुआ, जिस कार्यक्रम में बाबू राजेन्द्र प्रसाद उपस्थित थे। किसी क्षेत्र में—सेवा के कार्यक्रम में बुलाया और ले गये। राजेन्द्र बाबू ने अपने भाषण में कहा कि ईसाई मिशनरी बहुत अच्छा काम करते हैं। सेवा का काम करते हैं। स्कूल चलाते हैं, अस्पताल चलाते हैं, बड़े अन्दर तक पहुंचते हैं, हमलोग इससे निश्चित रीति से प्रभावित है। एक ही काम अनुचित करते हैं, गांधी जी ने भी कहा, राजेन्द्र बाबू ने भी कहा, देश के अनेक नेताओं ने कहा, राजेन्द्र बाबू ने भी उस मीटिंग में कहा, कि अगर वे उसके साथ धर्मान्तिरण न करें तो फिर उनके काम का कोई सानी नहीं है, हम हृदय से इसका धन्यवाद देंगे। भारत का इतना बड़ा नेता खड़ा हुआ बोल रहा है और इसलिए कुछ संकोच किसी के मन में हो सकता है परन्तु निःसंकोच उसके बाद बोलने वाले पादरी विशप ने कहा, कि राजेन्द्र बाबू ने हमको यह सलाह दी है, हम उनका आदर करते हैं। परन्तु यदि आत्मा की सेवा नहीं कर सकते तो शरीर की सेवा करने से लाभ क्या है? हमने शरीर की बहुत सेवा की और आत्मा अंधकार में भटकती रही इस-लिए इसकी सेवा करना नितान्त आवश्यक है। वो काम हम छोड़ नहीं

सकते उसके बिना उनकी सेवा पूरी नहीं है मानो ईसाई न होने से तो आदमी की आत्मा अंधकार में भटकती रहती है, आत्मा नरक में जायगी ही ऐसा उनका भाषण हुआ। तो आप कल्पना कर सकते हैं कि कितना स्पष्ट लक्ष्य उनके सामने है। दो साल पहले त्यागी बिल आया था जिसमें कहा गया था कि धन से, धमकी से, और धोखे व दबाव से लालच देकर धर्मांतरण ठीक नहीं है। परन्तु हमने देखा सारे देश में ईसाई पादरियों ने कैसा जबरदस्त आन्दोलन उसके लिये किया। एक-एक स्कूल से कैसे दस्तखत कराये गये। कैसे जलूस निकाले गये और अन्ततोगत्वा ऐसे राजनैतिक दबाव, जन-संख्या केवल पौने दो करोड़ होने के बाद उन्होंने निर्माण किया कि बहुत से राजनैतिक सूझ-बूझ रखने वाले लोगों ने कहा कि इसको बिलकुल वापस कर लेना ही अच्छा है।

चतुराई की योजना

उनकी योजना कैसे बनती है। थोड़ा सा अन्तर है। मुसलमान की योजना क्रूर रहती है इनकी योजना में थोड़ा विनय है उसके अन्दर थोड़ी सूक्ष्मता है, उसमें थोड़ी चतुराई है। वो एक शोध का आधार लेते हैं और शोध के नाम पर ऐसी बातें खोज निकालते हैं, जो उस देश के टुकड़े-टुकड़े करने में सहायक हो सकती है। जैसे आर्य देश के बाहर से आये, आर्य और द्रविड़ की लड़ाई हुई और इसलिए उत्तर और दक्षिण के अन्दर कैसे झगड़ा पैदा हो सकता है, यह द्रविड़ है, और उत्तर में शेष सब आर्य हैं, यह उनकी उपज है। कहीं परवेदों के अन्दर, किंचित भी उस देश का वर्णन नहीं है, भारत का ही वर्णन है। अगर वेदों की रचना आर्यों ने की, तोकहीं तो वर्णन होता—सारा वर्णन भारतवर्ष का है। द्रविड़ों कोऐसा न लगे कि यह देश हमारा है इसलिए उनके सामने प्रश्न रखा गया कि यहाँ आदिवासी रहते थे, उनको जंगलों में भेजने का, पहाड़ों में ढकेलने का, काम इन द्रविणों ने किया होगा, माने आपस में—कैसे लड़ाई हो सकती है। नाम व शब्द में क्या है ? जो भिन्न-भिन्न स्थानों पर रहते हैं—उनके जीवन के अन्दर अन्तर

आ जाते हैं। हमारा एक भाई एक-दोपीढ़ी से—अगर बम्बई शहर में रहता है और कोई एक छोटे स्थान गाँव में रहता है। बीस-पच्चीस साल के अन्दर आप उनकेजीवन में अन्तर देखेंगे कि उनकी धोती पर टिनोपाल लगा है, किसी पर नील होगा, किसी पर बिल्कुल मिट्टी कारंग होगा। तो ऐसा, बात-चीत में, कपड़े-लत्ते में अन्तर आ जाता हैं। हमारे यह जो बन्धु हैं, जो इतनी दूर जंगलों के अन्दर रहते हैं, पहाड़ों के अन्दर रहते हैं, उतना सम्पर्क आज के विज्ञान से नहीं आता—तोयह उनका अन्तर है। यह कोईभिन्न काल में आये हुये बसे हुए लोग हैं, इस प्रकार की बात नहीं परन्तु आज उसको अच्छे-अच्छे प्रोफेसर्स भी मानने के लिए तैयार हैं कि मणिपुर के रहने वाले, आसाम के अन्दर रहने वाले, नैपाल के अन्दर रहने वाले, इनकी जातियां ही अलग हैं, इनके वंश ही अलग हैं, यह तो मंगोल वंश से है। उस देश के साथ इनका कोई नाता नहीं है। मैंने तो उल्टा देखा है—कि बिहार से एक समय जो असम में टी गार्डन में चलेगये—बाल-बच्चे वहीं होने लगे, वहां बस गये, उनकी भी नाक चपटी है, लगता है कि कुछ जलवायु का असर होता है। उस एरिया में रहने के कारण मनुष्य ऐसा बनता होगा। परन्तु यह कहना कि यह तो जाति अलगहै, यह तो बर्मा के हैं, यह तो मंगोल हैं; कैसे दूरी पैदा हो सकती है, कैसे झगड़े पैदा हो सकते हैं; इस प्रकार का बड़ा सूक्ष्म शोध करते हैं। तमिलनाडु तो बड़ा इसके लिये प्रसिद्ध हो गया एक नये क्रिश्चियन बने थे, पादरी से पैसा लेते थे और बहुत सी खोजें उन्होंने की और लिखा कि ईसाइयों से सारा साहित्यलेकर त्रिवल्लूवर ने अपने साहित्य की रचना की है। बाद में जब वह सारा भंडाफोड़ हुआ तो उसने कहा कि साहब यह तो मुझसे कहा था कि ऐसी तुम कुछ खोज कर निकालो, हम तुमको इतना रुपया देंगे। रुपये के आधार पर मैंने खोज की। तो ऐसे भी शोध को सब प्रकार से पैसा देने वाले प्रमुख कुछ लोग व प्रमुख संस्थायें हैं। यह उनके शोध की विशेषता है।

बनवासी पर्वतीय क्षेत्र उनके निशानें

मुसलमान ऐसा शोध नहीं करता न उसको इसकी आवश्यकता है।

शायद उसकी वह भावना नहीं है कि वह सेवा करेंगे, अस्पताल स्कूल आदि खोलेंगे। आज वनवासी क्षेत्र के अन्दर कितना बड़ा संकट है। आपने सुना होगा कि स्वयंसेवक बन्धु तो ७०० ग्रामों में पहुंचे हैं लेकिन उनका काम ५००० ग्रामों में है। २०० करोड़ रुपया उसके लिये विदेशों से आता है। सैकड़ों हजारों लोग काम करते हैं। उनके अपने देश में उनको धर्म-प्रचार व सेवा की आवश्यकता नहीं है, भारत क्यों आते हैं? भारत को ईसाई बनाना है—वे भी जनसंख्या बढ़ाने पर विश्वास रखते हैं पर चतुराई से। बड़े प्रदेश में जनसंख्या बढ़ाने का भी कुछ असर नहीं होगा। अतः छोटे-छोटे प्रदेश छांटते हैं—नागालैंड, मिजोरम, मणिपुर गोवा कि जिनकी जनसंख्या थोड़ी है और थोड़ी सी जनसंख्या बढ़ाने से बड़ा अन्तर आ सकता है। जब तक उनकी जनसंख्या ज्यादा नहीं होती तब तक वे बड़ी समझदारी व चतुपर एक बार जनसंख्या राई से बात करते हैं। जरा अधिक पहुंची तो उनका सही रूप प्रकट हो जाता है। आज मिजोरम और नागा-लैंड में क्या उनके नारे हैं—यही नारे कि हम भारत के नहीं, भारतवर्ष से हमारा कोई मतलब नहीं। मणिपुर में, गोवा में, उन्होंने विशेष प्रयास किया है। मणिपुर में २६./ हैं तो मणिपुर में उनका प्रयास है कि सारे समाज को, हिन्दू-समाज से काटा जाये। हिन्दू समाज से अगर यह जुड़े रहते हैं तो हिन्दू-समाज के अन्दर एक ओर जहां बिल्कुल उत्तुंग विचार है, वेदान्त का विचार है, सब दुनिया में एक सत्य व्याप्त है तो दूसरी ओर बिल्कुल साधारण व्यक्ति के लिए भी है, पशुकी पूजा कर सकता है, पत्थर की पूजा कर सकता है, पेड़ की पूजा कर सकता है। मुझे स्मरण है जो नागा कहलाते हैं, कुछ लोगों से बातचीत हुई तो उन्होंने कहा कि हम तो हिन्दू नहीं हैं—तो मैंने कहा कि आपका कौन सा धर्म है। 'हमारा धर्म तो एनीमिस्ट धर्म है। यानी प्रकृति पूजा।' किसकी पूजा आप करते हैं? वृक्ष की करते हैं, पशु की करते हैं। पक्षी की करते हैं। तो भाई हिन्दू धर्म के अन्दर इन सारी पूजाओं का स्थान है। हम पीपल की पूजा करते हैं, हम कोई वृषभ की पूजा करते हैं, हम कोई नीलकंठ की पूजा करते हैं। तो इस प्रकार की पूजा तो है, परन्तु

अगर यह हिन्दू धर्म के साथ संलग्न रहेगा तो फिर इसको बदलना कठिन होगा। पहले कहना कि तुम हिन्दू नहीं हो, हिन्दू तुम्हारे ऊपर एक थोपा हुआ धर्म है। तुम तो प्रकृति पूजक हो, तुम्हारी तो एक अलग संस्कृति है। हमारे देश के नेता भी मान जाते हैं। फादर इलविन ने जब पं० नेहरू से जाकर कहा कि इस क्षेत्र के अन्दर बाहर से आया व्यक्ति छा जायेगा। बिशेषकर पंजाब-बंगाल का, विभाजन हुआ था, बंगाली आयेगा, पंजाबी आयेगा तो छा जायेगा। इनकी संस्कृति नष्ट हो जायेगी और इसलिए उस एरिया के अंदर रोक लगनी चाहिए। परमिट होना चाहिये, इन लोगों की आने की अनुमति नहीं होनी चाहिए। मगर इन्होंनेइनकी संस्कृति की सुरक्षा क्या की ? फादर इलविन व उनके सारे क्रिश्चियन मिशनरीज ने तभी तो इतनी जल्दी अपनी संख्या, साढ़े चार लाख के नागालैंड में ६० प्रतिशत करली। हमारे देश के नेताओं कोकहा कि भारत की बाकी की संस्कृति के साथ यह जुड़ने नहीं चाहिए और जब एक बार यह हिन्दू से अलग हो जाते हैं तब फिर कहते हैं कि तुम्हारे पास क्या सिद्धांत है, तुम्हारे पास क्या विचार है, तुम्हारे पास तो कुछ भी नहीं है। यह क्या कोई धर्म है ? तुम्हारा पेड़ की पूजा, पत्थर की पूजा, पशु की पूजा यह कोई धर्म है। यह कितना निकृष्ट विचार है। देखो 'ईसू' कौन था। कैसा श्रेष्ठ था। ईश्वर का लड़का था उसकी शरण में तुम आओ, फिर उनको सुविधा होती जाती है। हम तो कह सकते हैं कि तुम्हारे यहां ईश्वर का लड़का पैदा हुआ मगर हमारे यहां तो स्वयं ईश्वर पैदा हुआ। हम इसे प्रत्यक्ष अवतारों की भूमि मानते हैं कितने अवतारों ने यहां पर जन्म लिया और इसलिए हिन्दू समाज से अलग करना और फिर अलग करने के बाद ईसाई बनाना यह उनका प्रयोग चल रहा है। चतुराई से स्थान छांटते हैं—जहां-जहां उनकी जनसंख्या बढ़ती हैं वहाँ-वहां अलगाव की भावना पैदा होती है। रोमनलिपि होनी चाहिए, वेष उनका बदले, पुराना वेष खत्म होना चाहिए, पुराना साहित्य खत्म होना चाहिए। अभी दिल्ली के अन्दर बनवासी क्षेत्र का जो सम्मेलन हुआ था, काफी लोग ऐसे थे जो पहले ईसाई पादरी थे। 'जब

उन्होंने देखा कि यह तो हमारे संस्कृति पर, हमारे धर्म पर आघात करते हैं, कुछ लोग छोड़कर अपने पुराने विचार के साथ आये। ईसाई पादरियों के कार्यों से हम परिचित इसलिए नहीं हैं क्योंकि वे बड़े दूर-दराज इलाकों में जहां हम जाते नहीं वहाँ पर कार्य करते हैं। पहले थोड़ा ऊपर से परिवर्तन करते हैं। एकदम उसी दिन नाम बदल देना, उसी दिन वेष बदल देना, वैसा नहीं करते हैं। धीरे-धीरे करते हैं। चतुराई से करते हैं। हमने सुना होगा कि कन्याकुमारी जिले के अन्दर ५० प्रतिशत ईसाई बन जाने के बाद उनकी तरफ से आज मांग आई है कि इस जिले का नाम वास्तव में कन्याकुमारी नहीं तो कन्नीमैरी है। मेरा भी तो कन्या ही थी। यह कन्नीमैरी का स्थान है, यह कन्नी मैरी का मन्दिर है। जिले का नाम कन्नीमेरी होना चाहिए। तो उनका रंग-ढंग भी उसी प्रकार का है, जनसंख्या कैसे बढ़े, प्रभाव कैसे बढ़े, राजनैतिक प्रभावकैसे बढ़े ?—सब प्रकार से समाज से अलगाव की भावना कैसे बढ़े।

त्रिकोण विदेशी षडयंत्र

फिर एक और बात दिखाई दे रही है कि जो लोग दुनिया के अन्दर आपस में लड़ते हैं बड़ी शक्ति हैं—साम्यवादी शक्तियां हैं, ईसाई शक्तियाँ हैं, *लड़ रही हैं। पश्चिमी* योरुप और रूस में लड़ाई किस बात पर है ? मुख्यतः कम्यूनिज्म के विरोध के ऊपर है परन्तु भारतवर्ष के अन्दर यह दोनों हाथ मिला सकते हैं। कम्यूनिस्ट व क्रिश्चियन मिलकर भी इस देश के अन्दर तोड़-फोड़ कर सकते हैं। इसके लिए भी प्रयत्न दिखाई देता है। बंगलौर के अन्दर थोड़े दिनों पहले जो सम्मेलन हुआ था सी०सी०ए० का, क्रिश्चियन चर्च आफ़ एशिया, उसके अन्दर जो प्रमुख व्यक्ति है, वो चीनी है। और चीन का चक्कर मारकरआया है। शायद वहाँ लोगों से योजना बनाकर आया है और यहां पर के भाषणों में यह निश्चय हुआ कि हमको तो केवल सेवा करनी है, केवल अस्पताल खोलना है, ऐसा नहीं तो यहां इस देश के अन्दर बड़ा जातिवाद है। ये हरिजन है यह पिछड़ा है, ये ऊंची जाति का है इनके

बीच में बड़ा भेद है और इसलिए जो दुर्बल वर्ग है जो पिछड़ा हुआ वर्ग है, ये जो निचला वर्ग है उसके लिए हमको संघर्ष में मदद करना है। शब्दावली ऐसी लगेगी कि जैसी कम्यूनिस्ट शब्दावली होती है। उन लोगों ने कहा है कि हम लोग जो यहां काम करते हैं हमारा यह धर्म है कि इस लड़ाई में हमें जो ये दबा हुआ तबका है और जो शोषित हिस्सा है उसकी सब प्रकार से मदद करना और यहां तक कहा है कि सशस्त्र संघर्ष में भी मदद करना है। इस प्रकार का उनका प्रयास चला है। लगता है कि कम्युनिस्ट चीन के लोगों से विचार लेकरयहां पर सी० सी० ए० के लोग काम करते हैं। एक दूसरी चीज बनाई है यू० आर० मिशन और उसने कहा है कि युवक इस काम में बहुत उपयोगी हैं। युवकों को एकत्रित करो उनको संगठित करो उनको विदेशों में ले जाकर प्रशिक्षित करो। और फिर इस प्रकार के संघर्षों में उन युवकों को आगे रखा जाये। इस प्रकार का भी प्रयास चला है अर्थात् इस पद्धति के अन्दर थोड़ी कम्युनिस्ट कार्यप्रणाली का भी समावेश हुआ है। दिखाई देता है कि विदेशों में दोनों आपस में संघर्ष करते होंगे परन्तु हमारे देश के टुकड़ेकरने के लिए, हिन्दू समाज को कम करने लिए दोनों मानों हाथ मिलाकर एकजुट हो गये हैं। ऐसा लगता है, उन्होंने कहा कि पहाड़ों में हम करेंगे, मुसलमानों से कहा किशहरों के अन्दर या देहातों के अन्दर तुम करो। हम अनुसूचित कबीलों का हिसाब करें, तुम अनुसूचित जाति का हिसाब करो ऐसा मानों बांट लिया हो। दुनिया के अन्दर मुसलमान या ईसाई के झगड़े हमको पता हैं। साइप्रस में झगड़ा है, लेबनान में झगड़ा है, नाइजीरियामें झगड़ा हैं। वहां के मुसलमान व ईसाई दोनों आपस में कैसा संघर्ष करते हैं। एक दूसरे को मिटाने के लिए तुले हैं पर भारतवर्ष में हिन्दु समाज इनका भक्ष्य है, शरीर बड़ा है इसको तो समाप्त करना चाहिए। कैसे-कैसे तर्क देते हैं सुनने लायक रहता है। एक बड़े शोधकर्त्ता हैं प्राची के, उन्होंने तर्क दिया है कि हिंदुस्तान में जनसंख्या असंतुलित है, हिन्दू बहुत है, क्रिश्चियन बहुत कम है इसीलिए कुछ अशांति की सम्भावना है, और मसलमानों से कहा कि आप तो पर्याप्त हैं और

इसलिये आपको किसी प्रकार के संकट की समस्या नहीं । थोड़े दिनों की मदद कीजिए । क्रिश्चियन बढ़ जायें, तीनों बराबरी के दर्जे पर आ जायें, फिर कोई झगड़ा नहीं होगा, बड़ी शान्ति रहेगी इस देश में । तो येसंतुलन पैदा होना चाहिए और संतुलन समझा रहे हैं, हिन्दू को भी समझा रहे हैं कि इस देश की शान्ति के लिए बड़ा आवश्यक है कि क्रिश्चियन की संख्या बढ़े और ये संतुलन उत्पन्न हो ।

कम्यूनिस्ट संकट

तीसरे संकट से भी हम अनभिज्ञ नहीं हैं और वह है कम्युनिस्ट संकट । बहुत पुराना नहीं है, सबसे आयु में छोटा हैं, सिद्धान्त तो १८ वीं शताब्दी में दिये गये परन्तु उसका प्रयोग १९१७ में पहली बार रूस में हुआ । रूस एक कम्युनिस्ट देश बना, उसने अपना सिद्धांत बनाया कि दुनिया में हमें सबको कम्युनिस्ट बनाना है । आर्थिक शोषण सेमुक्त करना है, दुनिया के मजदूरों को एक करने की बातें, ये सारी बातें उन्होंने रखी । पन्रतु मैं समझता हूं कि ६० साल के अन्दर दुनियां के अन्दर उनको भी काफी लोग पहचानने लगें हैं । प्रत्यक्ष रूस के अन्दर जहाँ उन्होंने कहा था कि हम तो गरीबी दूर करने के लिए जो शोषित हैं, उसको ऊपर उठाने के लिए सब प्रकार, से प्रयत्नशील हैं वहां पर भी तो जीवन की बहुत छोटी-छोटी साधारण सुविधायें भी नहीं दे सके जो पश्चिमी जनतंत्रीय देश जर्मनी फ्रान्स, व इंगलैडमें आज प्राप्त है । और आपको आश्चर्य होगा आज उन्होंने जर्मनी की कम्पनी से, इटली की कम्पनी से, फियेट कम्पनी से ट्रक बनाने के लिए, मोटर बनाने के लिए सौदे किये हैं । बाहर के पूंजीवाद देशों केसाथ समझौते करना ऐसी चीजें बनाने के लिये, सुविधा की चीजें बनाने के लिये, क्यों ? क्योंकि उनको लगता है कि उनके देश में ये चीजें तैयार नहीं हो सकती । उनके आँखों पर से परदा हट गया, जबसे द्वितीय महायुद्ध के बाद रूमानिया, लिथूनियां, पौलैण्ड रोमानिया, बलगेरिया, इन सबके ऊपर एक अधिसाम्राज्य रूस ने बनाकर रखा है । पौलैंड के अन्दर एक स्वतंत्र आन्दोलन मजदूरों की यूनि-

यन का बना है, सोलीडेरिटी। किसी भी देश के अन्दर यूनियन बनाने की सुविधा नहीं। किसानों के बड़े भारी सहायक माने जाते थे परन्तु रूस के अन्दर किसानों के साथ बड़ा अत्याचार किया गया। इसलिए न तो गरीब के पोषक हैं, न दुर्बल के रक्षक हैं, और न साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ने वाले हैं। वो आपस में बड़ा भाई चारा रखते हैं, यह भी सिद्धान्त बिल्कुल गलत निकला है। जैसे ही दो तीन राष्ट्र कम्युनिस्ट राष्ट्रबनें, रूस बना, चीन बना, युगोस्लाविया बना, तो ध्यान में आता है कि उनके संघर्ष आपस में इतने कठोर हैं कि जितने शायद हमारे आपस के संघर्ष नही हैं। आज चायना और रूस एक दूसरे के खिलाफ लड़ने के लिए सीमाओं पर तैयार बैठा है।

सस्ता किन्तु देशभक्ति नष्ट करने वाला साहित्य

इतने बड़े सिद्धान्त को उन्होंने इतने दिनों से विचार का जामा पहनाया हुआ है। लाखों पुस्तकें मुफत हरेक देशमें भेज सकते हैं। भारत के अन्दर सबसे सस्ती पुस्तकेंसब भाषाओं की कम्युनिज्म के सिद्धान्त की मिल सकती हैं। बाजार में आप देखकर कहेंगे कि इतना तो रद्दी में बिक जायेगी। लेनिन की जीवनी, मार्क्स की जीवनी, एन्जिल की जीवनी ५ रुपये के मूल्य की एक रुपये में भीबेंचनें को तैयार हैं।

बहुत बड़ी मात्रा में साहित्य उन्होंने सारे देश में वितरित किया है। उनमें देश-भक्ति कैसीहै, सबके ध्यानमें आता है। ४२ की लड़ाई में कांग्रेस केअन्दर रहते हुये उन्होंने कांग्रेस का साथ छोड़कर अंग्रेजों का साथ दिया क्योंकि रूस का प्रश्न था। ६२ की लड़ाई में इस देश केअन्दर सी. पी. एम. चीन के साथ था। वह मानने के लिएभी तैयार न थे कि चीन ने आक्रमण किया है। रूस अभी अफगानिस्तान तक आया है 'हम स्वागत करेगें अगर इसी प्रकार से रूस भारत वर्ष चला आया' इस प्रकार के पर्चे विश्वविद्यालय केअन्दर निकालने कीहिम्मत पड़ी। भारतवर्ष से उन लोगों का बिल्कुल सम्बन्ध नहीं—रूस से, चीन से, सम्बन्ध है। हमको इस प्रकार देश-भक्ति-

शून्य बनाते हैं। संस्कृति के प्रति अभिमान नहीं स्वजीवन के किसी भी वस्तु के प्रति अभिमान नहीं, इस प्रकार की विचारधारा बनाते हैं। उन्होंने मजदूरों के अन्दर,अच्छा वेतन मिलेगा, अधिक सुविधायें मिलेंगी ये बड़े-बड़े उद्योगपति तुमको चूसते हैं, तुम्हारा सब शोषण करते हैं इसलिए उनके विरुद्ध लड़ो ऐसी एक बड़ी अच्छी आकर्षक विचार-धारा रखी है। मजदूरों में उनका सफल काम है। मजदूरों के अन्दरयही भावनातो वे भड़काते रहते हैं। उनका अच्छा काम विद्यार्थियों में है, बुद्धिजीवियों में है, अध्यापकों में है, लेखकों में है, जर्नलिस्ट में बहुत बड़ा नम्बर है। लोगों को रूस भ्रमण को भेजते रहते हैं। सब प्रकार की लोगों को सुविधायें देते रहते हैं। उनके लेख छापकर उनको पैसे देते रहते हैं और आपको आश्चर्य होगा कि इस देश में कांग्रेस जिसका शासन है, उसके प्रत्येक प्रान्त में अपना अखबार नही हैं, प्रत्येक भाषा में अपना अखबार नहीं है, पर कम्युनिस्ट विचारधारा के अखबार हर एक भाषा में हर एक प्रान्त में विद्यमान है।कभी-कभी उनकी जो दुकाने लगती हैं, उनकी कभी प्रदर्शनी लगती है रूसी साहित्यकी, तब ध्यान में आता है कि कितने प्रकार का साहित्य आता है हर साहित्य को पढ़ने के बाद आपको ध्यान में आयेगा कि वो रूस के पृष्ठ पोषण के लिये है। आज चीन का साहित्यनहीं आ सकता, चीन से सम्बन्ध अच्छे नहीं हैं। रूस से सम्बन्ध अच्छे हैं तो उसके आधार पर रूस का समर्थन इस देश के अन्दर होता है। मैं उनकी कुछ विज्ञान की पुस्तकेंले आता था, और पढ़ता था तो ध्यान मेंआया कि हरेक सिद्धान्त के विषय में लिखा हुआ है कि वो रूसी ने ही खोजा था। न्यूटन का सिद्धान्त हो क्या, आइस्टीन का सिद्धान्त हो, हरेक सिद्धांत किसी न किसी रूसी ने ही खोजा था, मगर छप नहीं सका बाद में किसी दूसरे ने उसे प्रकाशित कर दिया। शुद्ध रूस भक्ति सिखाने वाला सारा साहित्य रहता है। प्रचार में बहुत आगे हैं और इसलिए विद्यार्थियों में असंतोष, अध्यापकों में असंतोष मजदूरों में असंतोष, देश में कहीं स्थिरता न आने पावे। किसी प्रकार से देशभक्ति न आने पावे ऐसा उनकाप्रयास चल रहा है। राष्ट्र भक्ति, देश भक्ति, संस्कृति के प्रति

प्रेम, ये उनके लिये सबसे खतरनाक चीजें हैं। और इसलिए राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ का कहीं किंचित भी काम न बढ़ सके, केरल में इस प्रकार से उन्होंने संघर्ष किया है कैसे हमारे कार्यकर्ता मारें हैं, आप परिचित हैं।

हम सभी संकटों पर विजयी होंगे

ये कम्युनिस्ट भी विदेशों में ईसाइयों के साथ लड़ते होंगे परन्तु हमारे देश में ईसाइयों की मदद करने के लिए तैयार हैं। शायद ईसाई भी हमारे देश के अन्दर कम्युनिस्टों की मदद करने के लिए तैयार हैं। ये तीनों खतरे हमारे देश के नजदीक भी है व बहुत बड़ी मात्रा में विद्यमान है परन्तु ये मैंने इसलिए नहीं बताये कि इससे हमारे मन में भय उत्पन्न हो। कभी-कभी जब नक्शा देखने के लिए हम अपनी आँखों के सामने रखते हैं तो ऐसा लगता है कि पाकिस्तान से लेकर लीबिया तक हरे रंग में रंगे हुए राष्ट्र हैं, पाकिस्तान है, अफगानिस्तान है, ईरान है, सीरिया है, इजिप्ट है, लीबिया है, इल्जीरिया है, इधर बंगला देश से लेकर इन्डोनेशिया तक इस प्रकार के राष्ट्र हैं। ऊपर दिखाई देता है कि चीन बैठा है, रूस बैठा है, दोनों बिल्कुल नजदीक आ गये हैं। भारतवर्ष की सीमा छू रहें हैं। क्रिश्चियन मिशनरियों को तो छूट है, पश्चिमी देशों के लोग देश केअन्दर हजारों की संख्या में घूमते हैं सब प्रकार का काम करते हैं। सौ से अधिक आज दुनिया के अन्दर क्रिश्चियन राष्ट्र है, जो सब प्रकार से पैसा देते हैं। इस सारे नक्शे में भारत व नैपाल ये दो हिन्दू बहुल देश हैं जहाँ एक शक्तिशाली राष्ट्र बनने का स्वप्न देखने वाले लोग हैं। ऐसा लगता है जैसा चारों तरफ से हमें घेरे हुये हैं। कभी-कभी इस सारी समस्याओं को देखकर ये विचार उत्पन्न हो सकता है कि समस्या तो बड़ी है, कठिन है, काम बड़ा जटिल है, परन्तु हम विचार करें तो इतना जटिल नहीं है। आज ये मुस्लिम देश भले ही हमारे देशके ऊपर छाने का प्रयास कर रहे होंगे परन्तु आपस में भी बड़ी जोरों से लड़ रहे हैं। ईरान ईराक की लड़ाई एक दूसरे को नष्ट करने के लिए, एक दूसरे के तेल कुयें नष्ट करने के लिए चली है। उधर लीबिया

की इजिप्ट से लड़ाई चली है। तेल भी कितने दिन रहने वाला है। तेल खत्म हो जायेगा तो क्या उनकी स्थिति बनेगी। विश्व की समस्याओं की समझदारी से सोचने के लिये आपस में न लड़ने के लिये उन्होंने किसी प्रकार के गठबन्धन नहीं किये हैं। अपने देश में भी शिया-सुन्नी लड़ता है। पाकिस्तान में अहमदिया और बाकी का झगड़ा होता है। संघर्ष है। ईसाई का प्रश्न आता है, उनके पास धन है, विज्ञान भी उनके यहाँ विकसित हुआ है, और विज्ञान की चोट पड़ते ही उनके धर्म की चौखट की नीचे से नींव चरमरा उठी है। आज अमेरिका के सारे गिरजाघर खाली पड़े हैं। आज लोग हरेराम हरेकृष्ण के आन्दोलन में चारों तरफ से आते हैं। आज कहीं महेश योगी ध्यान सिखाने जाते हैं तो उसमें अमेरिका का आदमी, इंग्लैण्ड का आदमी बड़े-बड़े विचारवान व्यक्ति कहते हैं कि भाई इस सिद्धान्त में कुछ है। हमारे यहां ईसाई भले ही इस प्रकार का प्रचार करते होंगे, हमारे भूखे, नंगें, बन्धुओं के बीच में आपने सेवा के धन-साधन से वो कहते होंगे परन्तु उनके धर्म में, उनके सिद्धान्तों में वो आकर्षण नहीं है। विज्ञान के साथतो अक्सर तालमेल हो नहीं सकता। ऐसा लगाहै कि विज्ञान की चौखट जैसे-जैसे मजबूत होगी ईसाई धर्म उस पर बैठ जायेगी। साम्यवाद ने भी ६० वर्ष पूरे होने के बाद जो बड़े-बड़े वायदे किये थे वो वायदे पूरे नहीं किये। आज एक लेखक का मैंने लेख पढ़ा था, सबसे बड़ा खतरा रूस में यह नहीं है कि प्रगति नहीं हुई, रूस में सबसे बड़ा खतरा है कि आज लोगों को साम्यवादके सिद्धान्त पर से विश्वास हटगया है।वो एक निहित स्वार्थ वाली पार्टी है। कोई क्रान्तिकारी भाव नहीं। जीवन के अन्दर कोई ऊँचा सिद्धान्त न होने से कैसा जीवन गिरता है आज से २५ वर्ष पूर्व जो पहले २५ प्रति-शत थे आज युवकों में ६७ प्रतिशत लोग शराब पीते हैं। चीन और रूस से किसी भी समय संघर्ष हो सकता है। हमारे देश के सिद्धान्त पिछले ५, ६ हजार वर्षों से तरह-तरह के संघर्ष से निकले हुए आज जीवित हे। और इन सब आपदाओं के बावजूद ६० करोड़ हिन्दू हैं। विदेशों के अन्दर भी २ करोड़ हिन्दू हैं, और प्रभावी हिन्दू हैं। लगता है कि भगवान ने इसके पीछे कोई

योजना की होगी, इस धर्म को, इस जीवन के सिद्धान्तों को, इस समाज को जीवित रखने के पीछे। हम इन सिद्धान्तों की श्रेष्ठता को प्रतिपादित कर सकते हैं परन्तु उन सिद्धान्तों की श्रेष्ठता को प्रत्यक्ष जीवन में उतारकर कहीं दिखा सकते हैं तो भारतवर्ष में। इसलिये भारतवर्ष को इन सिद्धान्तों के आधार पर खड़ा किया और एक सुखी राष्ट्र और सब दृष्टि से सबल राष्ट्र दुनिया में प्रतिष्ठित किया तो सारे विश्व की सारी शक्तियां पीछे हटेंगी और इन्हीं के लोग हमारे पीछे खड़े होंगे, यह चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है। काम बड़ा है, जितना ही काम बड़ा होता है उतनी ही अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है, उतनी ही अधिक त्याग माँगता है परन्तु उतना ही हृदय में उल्लास आता है। कि इतने महान कार्य का, इतने श्रेष्ठ कार्य का मैं अंग हूं हम सब स्वयंसेवक बन्धु इस प्रकार से इस श्रेष्ठ कार्य के अंग बने हैं। इस राष्ट्र को पुनरपि वैभवशाली बनाकर खड़ा करेंगे तो विश्व का भी कल्याण कर सकेंगे। ०००

1982

बेंगलोर

लोकहित प्रकाशन

लखनऊ